इस्लाम अरब राष्ट्रीयता का साधन

अनवर शेख़

इस्लाम अरब राष्ट्रीयता का साधन

अनवर शेख़

ISBN : 1-880628-10-4

प्रकाशक :

ए. घोष पाबलिशार्स

५७४० डब्लिऊ. लिटल् इयर्क

२१६, हिऊस्टन, टेक्सास् ७७०९१

इऊ. एस. ए

मूल्यः

२०.०० रुपये

२.०० डॉलर (इऊ. एस. ए)

सूची

भूमिका

पहला अध्याय	: राष्ट्रीयता - पैगम्बरी का मूल आधार	४
दूसरा अध्याय	: पैग़म्बर मुहम्मद	८
तीसरा अध्याय	: मुस्लिम संस्कृति	३६

भूमिका

जो मुसलमान अरब नहीं उन्हें इस्लाम ने इतनी हानि पहुंचाई है जो किसी भी दैवी आपत्ति ने नहीं पहुंचाई। फिर भी मुसलमानों को पक्का विश्वास है कि इस्लाम समानता और मानव प्रेम का प्रतीक है।

२.(क) मुहम्मद ने इस झूठ को बड़ी चतुरता से अटल सत्य के रूप में प्रस्तुत किया है। वास्तव में मुहम्मद ने सारी मानव जाति को दो भागों में बांट दिया है -- एक ओर अरब और दूसरी ओर सब दूसरे। इस विभाजन के अनुसार अरब तो राज करने वाले हैं, और बाकी सब अरब संस्कृति और साम्राज्यवाद द्वारा अरबों के अधीन रहने योग्य हैं।

२.(ख) इसलाम में मानव प्रेम का उल्लेख तो एक ढोंग है। दूसरों के प्रति घृणा ही इस्लाम का मूल आधार है। इस्लाम के अनुसार मुसलमानों को छोड़ कर बाकी सब सदा के लिये घोर नरक में जायेंगे। इस्लाम का ध्येय मुसलमानों और दूसरों में संघर्ष है जो कार्ल मार्क्स के सामाजिक संघर्ष के तत्व से कहीं अधिक अनिष्टकारी है। क्योंकि इस्लाम का ध्येय अरबों की महत्ता स्थापित करना है इसलिये इस्लाम को एक मत न कह कर अरब राष्ट्रीय आन्दोलन कहना चाहिये। इसकी सफलता का कारण दूसरे देशों के मुसलमानों का बुद्धि-नियंत्रण है जिस से वे अपनी संस्कृति और धरोहर को ठुकरा कर अरबों की महत्ता स्वीकार करने लगते हैं। इस विचार धारा का आधार मुसलमानों के इस अन्ध-विश्वास पर है कि मुहम्मद उन्हें स्वर्ग दिलवा सकता है। परिणाम यह हुआ है कि हिन्दुस्तान, ईजिप्ट (मिस्र) और ईरान जो संसार के महान देश गिने जाते थे इस्लाम के प्रभाव से अपने गौरव को भूल गये हैं और अब संसार के हीन देशों में गिने जाते हैं।

इस पुस्तक का विषय गम्भीर है चाहे कुछ लोग इस से मत के विषय में या राजनैतिक लाभ उठाने का प्रयास करें। यदि वे निष्कपट हैं तो जैसा कि कुरआन में लिखा है उसका पालन करें :

"....... अगर सच्चे हो तो दलील पेश करो। (२:१११)"

इस पुस्तक का विषय मेरी रचना "संस्कृति और भाग्य" (जो अभी छपी नहीं) का भाग है। क्योंकि इस पुस्तक का विषय मत और अन्तर्राष्ट्रीय है इसे पृथक प्रकाशित किया जा रहा है। कुछ बातों को जान बूझकर दोहराया गया है ता कि पाठक उन्हें याद रखें।

अनवर शेख़

पहला अध्याय

राष्ट्रीयता - पैगम्बरी का मूल आधार

यद्यपि यहूदियों और मुसलमानों का मूल एक ही है और इसलाम के सिद्धान्त यहूदियों के धर्म ग्रन्थों पर आधारित हैं फिर भी मुसलमानों और यहूदियों में ईंट कुत्ते का बैर है। जो बात उन का संगठन करती है वही उनके झगड़े का कारण है अर्थात् **इलहाम (revelation) का सिद्धान्त** जो कि सब से पुरानी शामी (semitic) प्रथा है।

इलहाम के सिद्धान्त के अनुसार सृष्टि का सर्जनहार भगवान है जो अपनी पूजा करवाना चाहता है। वह अपने पैगम्बर द्वारा मानव जाति को अपनी इच्छा प्रकट करता है। भगवान के संदेश वाहक पैगम्बर की आज्ञा पालन किये बिना मुक्ति नहीं मिल सकती। परिणाम स्वरूप हर नगर, देश आदि का अपना अपना भगवान होता था जिस का प्रतिनिधि मुल्ला राजा होता था। मानव कैसे रहें कैसे खायें कैसे सोएं आदि यह सब आदेश भगवान राजा को देता था और राजा (जो भगवान का सेवक था और जिस का अपना कोई प्रभुत्व नहीं) अपनी प्रजा से सब कुछ करवाता था। इसलाम का यह सिद्धान्त कि राज्य अल्लाह का है और इसको अल्लाह के विधान के अनुसार ही चलाना चाहिये इसी पुरानी शामी प्रथा पर निर्धारित है।

उदाहरणतया अस्सीरिया (Assyria) के राजा शल्मनेसर (Shalmaneser) को भगवान ने उसके शत्रुओं को समाप्त करने के लिये महान बल दिया जिस से उसने कर्कर (Karkar) के युद्ध में सब शत्रुओं (जिन में १०,००० इस्राईली थे) का नाश कर दिया। दूसरा उदाहरण मरदूक (Marduk) का है जो बैबीलोन (Babylon) का भगवान था। उस के पचास नाम थे। माना जाता था कि उस ने प्रकृति की और मानव की रचना की थी और वह ही सब राजाओं और उनकी प्रजाओं का भाग्य विधाता था। अस्सीरिया (Assyria) और ईरान के राजा भी मरदुक की आराधना करते थे।

मरदुक ईआ (Ea) का पुत्र था। उसने तिआमत (Tiamat) नामक दैत्य को मार कर अपनी पदवी प्राप्त की थी। मरदुक के अधीन अनेक देवता थे जैसे कि उतु (Utu - सूर्य देवता) जो न्याय का भी संचालक था।

इसी प्रकार बैबीलोन (Babylon) का प्रसिद्ध न्याय शास्त्र हम्मुराबी (Hammurabi) वास्तव में राजा का ही विधान था।

यहूदियों की यह प्रथा जिस में अधिकारी भगवान का प्रतिनिधि बनते थे बड़ी चतुरता से प्रचलित रखी जाती थी। पहले तो भगवान को इतना बलशाली दिखाया जाता था कि जनता उस से भयभीत हो कर अधीनता स्वीकार कर ले।

दूसरे यह मुल्ला-राजा (जो पैगम्बरों के पूर्व गामी थे) यह ढोंग करते थे कि उन्हें राज्य की इच्छा नहीं थी। वे तो केवल भगवान की आज्ञा से उस के प्रतिनिधि बन कर जन सेवा कर रहे थे। उन का उद्देश्य तो भगवान की इच्छा पूर्ति था। इस छल से वे लोगों पर मन माना राज करते थे। इन में से दो प्रमुख मुसा और मुहम्मद थे (ईसा भी इसी सांचे में ढला था परन्तु उसकी जीवनी का पूरा वृत्तान्त नहीं मिलता इसलिये उस की और व्याख्या करना व्यर्थ होगा)।

हर गैगम्बर की उच्चाकांक्षा के दो भाग होते हैं -- अपनी उच्चाकांक्षा और राष्ट्रीय उच्चाकांक्षा। वह भगवान कहाए बिना भगवान की भान्ति पूजा जाना चाहता है।

पैगम्बर अपनी जाति से प्रेम करता है और उसकी सुरक्षा और उन्नति का प्रयास करता है। **वह जानता है कि नेता बनने के लिये अनुगामियों की आवश्यकता होती है और नेता की महत्ता अनुगामियों पर निर्भर होती है। अतः पैग़म्बर एक कुशल राष्ट्रीय नेता होता है जिसका ध्येय अपनी जाति और देश की उन्नति होता है।**

पहले यहूदियों को देखें।

मूसा ने यहूदी मत चलाया। मूसा की तीव्र इच्छा थी कि उसका नाम अमर रहे। उसने इस्राईल का भगवान प्रस्तुत किया जो कि इब्राहीम,

इस्हाक् और याकूब का भी भगवान था। **मूसा ने यह भी कहा कि वह तो नेता बनना नहीं चाहता था पर विवश हो कर नेतृत्व कर रहा था।** उस ने यह भी कहा कि जब उसने भगवान का प्रतिनिधि बनने से इनकार किया तो भगवान रुष्ट हो गये इसलिये विवश हो कर उसे इस पद को स्वीकार करना ही पड़ा।

हम यहां पुरानी शामी प्रथा का प्रयोग देखते हैं। पहले तो मूसा अपने लोगों के लिये भगवान ढूंढ लाता है फिर भगवान के नाम पर लोगों से आज्ञा मनवाने के लिये स्वयम् भगवान का प्रतिनिधि बन जाता है। यह इस्राईल का भगवान है। यहुदी उसे याह्वे (Yahwe) के नाम से पुकारते हैं। वह अपना नाम नहीं बताता पर कहता है "मैं वह हूं जो मै हूं"।

यहूदियों में पैग़म्बर नाम मात्र को भगवान का सेवक है। वास्तव मे वह भगवान से भी श्रेष्ठ है। यह इस कहानी से स्पष्ट है।

कहते हैं कि यहूदियों की एक बछड़े की पूजा करने से याह्वे को अत्यन्त ईर्षा हुई। वह इस्राईलियों को अपने क्रोध की अग्नि से भस्म करने के लिये अपने दिव्य तेज के साथ प्रकट हुआ। इस पर मूसा ने याह्वे को डांटा कि यदि वह अपने ही लोगों को नष्ट कर देगा तो मिस्र के लोग क्या कहेंगे कयों कि याह्वे ने ही तो यहूदियों को मिस्र से मुक्ति दिलाई थी। **मूसा याह्वे को यह दुष्ट कर्म न करने की और पश्चात्ताप करने की आज्ञा देता है। (Exodus 32 : 12-14) कथानुसार याह्वे मूसा की अधीनता मान लेता है। फिर भी यहूदी कहते हैं कि वे कट्टर एकेश्वरवादी हैं।**

और भी कई कथाएं हैं जब मूसा ने याह्वे को डांटा और याह्वे ने मूसा की आज्ञा मानी जैसे जब यहूदी मिस्र लौट जाना चाहते थे (Numbers 14:11-20)।

केवल इतना ही नहीं। हर पैग़म्बर की महान बनने की इच्छा इतनी प्रबल होती है कि वह यह भी कहता है कि वही अन्तिम पैग़म्बर है। उसके बाद और कोई नहीं होगा। यदि कोई पैग़म्बर होने का अधिकार जताए वा तो वह ढोंगी होगा। परन्तु श्रद्धा वाले अनुगामियों के बिना तो मृत्यु पश्चात पूजा नहीं करवाई जा सकती। **इसीलिये हर पैग़म्बर के लिये राष्ट्रीय नेता होना अनिवार्य है।**

जैसे कि स्पष्ट है हर पैग़म्बर अपने भगवान का आविष्कार करता है और यदि कोई और पैग़म्बर होने का अधिकार जताये तो अपने द्वन्द्वी के भगवान के स्थान पर अपने भगवान को स्थापित करता है। अस्सुर (Assur), मरदुक (Marduk) और याह्वे (Yahwe) के उदाहरण इस का समर्थन करते हैं। और पैग़म्बर को कट्टर राष्ट्रीय अनुगामियों की भी आवश्यकता है जो कूटनीति से और बलपूर्वक पैग़म्बर का नाम अमर रखें।

दूसरा अध्याय

पैग़म्बर मुहम्मद

मुहम्मद का जन्म मक्का में लगभग सम्वत् ईसवी ५७० में हुआ और देहान्त ८ जून ६३२ में हुआ। मुहम्मद के कथन अनुसार सम्वत् ईसवी ६१० में हीरा गुफा में ध्यान करते हुए उसे जिब्रील (Gabriel) के दर्शन हुए। जिब्रील ने मुहम्मद को अल्लाह का लिखा हुआ संदेश पढ़ने को दिया और उसे लोगों को ज्ञान देने को कहा। जब मुहम्मद ने कहा कि उसे तो पढ़ना नहीं आता तो जिब्रील ने क्रुद्ध हो कर तीन बार मुहम्मद का गला घोंटा।

जब मुहम्मद ने अपनी पत्नी खादिजा को यह सब वृत्तान्त बताया तो खादिजा ने कहा -- तुम्हें अल्लाह ने अपना संदेश वाहक (पैग़म्बर) चुना है। इस प्रकार इच्छा न होते हुए भी मुहम्मद पैग़म्बर बना। यह विचित्र बात है कि सर्वज्ञ अल्लाह को इतना भी पता नहीं था कि मुहम्मद अनपढ़ था। फिर आश्चर्य इस बात का कि अल्लाह ने अनपढ़ मुहम्मद को अपना पैग़म्बर चुना -- किसी विद्वान को नहीं।

मुहम्मद ने अपने मत का नाम इस्लाम़ रखा। यद्यपि इंजील (Bible) में इस बात का कोई प्रमाण नहीं फिर भी मुहम्मद ने कहा कि इस्लाम ही भगवान का दिया हुआ पुराना सच्चा मत है। उसके अनुसार इस्लाम कोई नया मत नहीं था किन्तु वही पुराना मत था जिसको फैलाने के लिये भगवान् ने आदम, नूह, इब्राहीम, मूसा और ईसा को भेजा था। उस मत को यहूदियों ने भ्रष्ट कर दिया था इसीलिये भगवान को मुहम्मद द्वारा उसी सच्चे मत को फिर फैलाना था। इसी कारण मुहम्मद को यहूदियों की प्रथाओं को स्वीकार करने में कोई आपत्ति नहीं हुई क्योंकि वह तो भगवान के उसी पुराने मत को ही प्रचलित कर रहा था। उसने अपने मत को इस्लाम का नाम दिया -- यहूदी मत और इसाई मत से भिन्न। उसने यहूदियों का मत परिवर्तन करने का बहुत प्रयास किया। इसी लिये उसे अपने मत के लिये

ऐसे भगवान की आवश्यक्ता थी जिसे उसकी अपनी जाति वाले अरब तो मानें ही पर यहूदी भी मान लें।

यहूदियों का भगवान याह्वे था। इंजील के कुछ भागों से यह आभास होता है कि **एक समय याह्वे कई औरों के साथ एल (EL) के अधीन था (Deuteronomy 32:8-9)**। एल को अरबी में अल्लाह कहते थे। इस्लाम के भगवान के लिये इस से अच्छा नाम और क्या हो सकता था? अल्लाह याह्वे से उच्चतर था और मुहम्मद के सम्प्रदाय कुरेशों का भगवान था जिसको काबा का स्वामी कहा जाता था।

याद रहे कि शामी (Semitic) प्रथा के अनुसार पैगम्बर भगवान कहाना तो नहीं चाहता पर भगवान जैसी प्रतिष्ठा चाहता है। वह यह भी चाहता है कि उसका नाम अमर रहे। इस लिये उसे निष्ठा वाले अनुगमियों की भी आवश्यक्ता होती है।

मुहम्मद ने अल्लाह को इस लिये चुना था क्योंकि उस समय अरब देशों के समाज में यहूदियों का स्थान ऊंचा था। वह जानता था कि सफलता के लिये यह आवश्यक था कि यहूदी उस के मत को अपनायें अन्यथा या तो यहूदियों को नीची श्रेणी के नागरिक बनाया जाये या उन्हें देश से निकाल दिया जाये। पहले तो मुहम्मद ने यहूदियों को अपने साथ मिलाने के लिये उनकी बहुत प्रशंसा की। जेरुसलम को इस्लाम का किबला (सर्वोच्च स्थान) माना। यहूदियों को भगवान के चुने हुये लोग कहा। इसीलिये उस ने इब्राहीम को जो अरबों और यहूदियों का सांझा पूर्वज था आराध्य माना। कुरान में लिखा है:

> "ऐ बनी इस्राईल ! मेरे वे एहसान याद करो जो मैंने तुम पर किये और यह कि मैंने तुमको दुनिया वालों पर फजीलत बख्शी।" -- (२:१२२)

> "और उस शख्स से किसका दीन अच्छा हो सकता है, जिस ने खुदा के हुक्म को कुबूल किया और वह भले काम करने वाला भी है और इब्राहीम के दीन की पैरवी करने वाला भी है, जो यकसू (मुसलमान) थे और खुदा ने इब्राहीम को अपना दोस्त बनाया था। (४:१२५)

मुहम्मद ने अपने अरब अनुगामियों से यह भी कहाः

"तुम्हारे बाप इब्राहीम का दीन (पसंद किया) उसीने पहले (यानी पहली किताबों में) तुम्हारा नाम मुसलमान रखा था। (२२:७८)

जब यहूदियों ने फिर भी इस्लाम को नहीं अपनाया तो मुहम्मद ने क्रुद्ध हो कर जेरुसलम से हटा कर मक्के के काबे को इस्लाम का क़िब्ला (सर्वोच्च स्थान) बना दिया। यहां तक कि उसने यहूदियों को श्राप तक दिया :

"..

खुदा ने उनके कुफर की वजह से उन पर लानत कर रखी है।" (४:४६)

क्योंकि यहूदी अरब राष्ट्र का भाग नहीं बने उनको श्राप देना ही पर्याप्त नहीं था। इस लिये मुसलमानों ने उन को देश से निकाल दिया। **याद रहे कि इस्लाम एक मत नहीं पर अरब राष्ट्रीय आन्दोलन है।**

मुहम्मद ने अल्लाह को इसलिये चुना था क्योंकि अल्लाह की पदवी याह्वे की पदवी से उच्च थी सो अरब यहूदियों से उच्च हुए। फिर याह्वे तो केवल इस्राईल का भगवान था। अल्लाह को याह्वे से श्रेष्ठ बनाने के लिये मुहम्मद ने अल्लाह को सारी सृष्टि का भगवान बनाया -- सर्वज्ञ, सर्वशक्तिमान और सर्वव्यापक।

मुहम्मद ने अल्लाह को एक मात्र भगवान इसलिये बनाया था क्योंकि अल्लाह अरबों का था जिसकी मूर्ति की पूजा शताब्दियों से काबे में की जाती थी।

परन्तु अल्लाह तो बहुत सी दिव्य मूर्तियों में से एक था। काबा एक हिन्दु मन्दिर की भान्ति था हिन्दुओं के त्रिमूर्ति के सिद्धान्त पर आधारित। अल्लाह के साथ काबे में उसकी तीन पुत्रियों की पूजा भी होती थी। काबे पर मुहम्मद के सम्प्रदाय कुरेशों का अधिकार था इसीलिये कुरेशों को "अल्लाह के लोग" कहा जाता था। मुहम्मद ने अल्लाह को एक मात्र भगवान बनाया। उस ने यह भी विधान बनाया कि केवल उसके अपने सम्प्रदाय कुरेशों को ही राज करने का अधिकार है।

मुहम्मद ने कहा:

१. "अल्लाह ने पहले तो इब्राहीम के बेटे इस्माईल को चुना। फिर इस्माईल की संतति से अल्लाह ने (मुहम्मद के सम्प्रदाय) कुरेशों को चुना। फिर कुरेशों में से अल्लाह ने (मुहम्मद के वंश) बानू हाशिम को चुना और फिर बानू हाशिम में से अल्लाह ने सब से अच्छे पुरुष मुहम्मद को चुना"। (Jame Tirmze, Vol: 2)

यह कथन यहूदियों के कथन (Genesis 17:19-20) के विपरीत है। यहूदियों का दृढ़ विश्वास है कि इब्राहीम का उसकी विवाहिता पत्नी साराह द्वारा एक ही पुत्र था-इस्हाक। इस्माईल तो इब्राहीम का हागर (मिस्र से आई हुई एक दासी) द्वारा पुत्र था। भगवान का समझौता (Covenant) इस्हाक से था-इस्माईल से नहीं। इस्लाम में इस्माईल की संतति (अरबों) को यहूदियों से उच्च मानना तो अरब राष्ट्रीयता के कारण ही था ता कि अरब यहूदियों से उच्चतर माने जायें।

२. अल्लाह ने इस्माईल और इसहाक़ की सन्ततियों की दो जातियों को सर्वोच्च चुना। फिर अल्लाह ने इस्माईल की सन्तति (अरबों) को यहूदियों से श्रेष्ठ माना। फिर अल्लाह ने कुरेश सम्प्रदाय को चुना और फिर अल्लाह ने कुरेशों में से सब से अच्छे परिवार में सब से अच्छे पुरुष मुहम्मद को जन्म दिया। (Jame Tirmze, Vol 2)

३. जब लोगों ने मुहम्मद से पूछा कि उस को पैग़म्बर कब बनाया गया तो उसने उत्तर दिया कि जब आदम के शरीर और आत्मा का निर्माण हो रहा था। (Jame Tirmze, Vol 2)

जैसा कि पहले लिखा है मुहम्मद को जिब्रील के दर्शन ४० साल की आयु मे हूए जब उसने विवश हो कर पैग़म्बर बनना स्वीकार किया। आश्चर्य है कि यदि मुहम्मद आदम से भी पहले पैग़म्बर था तो उसने ४० साल तक पैग़म्बर होने का अधिकार क्यों नही जताया और न ही उसने पहले ४० साल मत प्रचार की कोई भी बात की।

४. .... अल्लाह ने मुहम्मद को सर्वश्रेष्ठ पुरुष चुना है। यह अटल सत्य है। (Jame Tirmze, Vol 2)

५. .... क़ियामत (Day of Judgement) पर मुहम्मद अल्लाह के दाईं ओर बैठे गा। किसी भी और को यह अधिकार नहीं होगा। (Jame Tirmze, Vol 2)
६. क़ियामत पर मुहम्मद (जो तुम्हारे पापों को क्षमा करवा सकता है) की शरण मे जाओ। केवल वह ही स्वर्ग दिलवा सकेगा। (Jame Tirmze, Vol 2)
७. क़ियामत पर मुहम्मद लोगों का मुखिया होगा। (Jame Tirmze, Vol 2)
८. मुहम्मद पहला व्यक्ति है जो अल्लाह और पुरुषों में मध्यस्थ होगा। वह पहला व्यक्ति है जिस की मध्यस्थता को अल्लाह स्वीकार करेगा। मुहम्मद ही स्वर्ग के द्वार खोल कर पहले तो स्वयम् प्रवेश करेगा फिर अपने अनुगामियों को स्वर्ग दिलवाये गा। वह आदि काल से अनन्त काल तक सब पुरुषों में श्रेष्ठ है। (Jame Tirmze, Vol 2)
९. मुहम्मद की प्रशंसा करो और उस से प्रार्थना करो। जो भी ऐसा करता है अल्लाह उसे दस गुना सम्पन्न करता है। (Jame Tirmze, Vol 2)

मुहम्मद के इन रूढ़ीवादों को समझने के लिये उसका अल्लाह के साथ सम्बन्ध जानना आवश्यक है। उदाहरणतया:

१. शहादा इस्लाम का मूल सिद्धांत है। यही किसी को मुसलमान बनाता है। अर्थात्:

अल्लाह के अतिरिक्त किसी को भी पूजे जाने का अधिकार नहीं और मुहम्मद उसका पैग़म्बर है।

इसको समझने के लिये इसे दो भागों में बांटा जाये। इस प्रकार:

अल्लाह के अधिकार:

"जो ईमान वाले हैं, वे तो खुदा ही के सबसे ज़्यादा दोस्तदार हैं।" (२:१६५)

"सब तारीफ़ खुदा-ए-रब्बुल आलमीन ही के लिए।" (६:४५)

ख. अल्लाह ने अपना पूज्य होने का अधिकार कुरआन में स्पष्ट बताया है:

"और मैंने जिन्नों ओर इंसानों को इसलिए पैदा किया है कि मेरी इबादत करें।" (५१:५६)

कुरआन में कई स्थानों पर अल्लाह कहता है कि उसने मनुष्यों को केवल इस लिए बनाया है कि वे अल्लाह की पूजा करें। आश्चर्य इस बात का है कि अल्लाह सब का निर्माता, सर्वज्ञ और सर्वशक्तिमान होते हुए भी मनुष्यों से पैग़म्बर भेजे बिना, नरक के डर बिना और स्वर्ग के प्रलोभन बिना अपनी पूजा नहीं करवा सकता।

इस्लाम में "शिर्क" अर्थात् आल्लाह के साथ किसी दूसरे को पूजना सब से बड़ा पाप है। यदि अल्लाह सब का निर्माता, सर्वज्ञ और सर्वशक्तिमान है जिस को पूजे जाने की इतनी इच्छा है तो वह निश्चय ही आज्ञाकारी मनुष्य बना सकता था। विदित है कि अल्लाह को नहीं पर पैग़म्बर को भगवान की भान्ति पूजे जाने की इच्छा है।

शहादा के दूसरे भाग के अनुसार:

२. पैग़म्बर के अधिकार:

क. यद्यपि मुहम्मद अपने आप को अल्लाह का दास कहता है फिर भी वह अल्लाह के विधान से ऊपर था। कोई मुसलमान एक समय चार से अधिक पत्नियाँ नही रख सकता पर मुहम्मद की एक ही समय नौ पत्नियां थीं।

ख. पैग़म्बर को अल्लाह की अनुमति है कि वह किसी की भी तलाक दी हुई पत्नी या विधवा से विवाह करे, पर यदि कोई और पैग़म्बर की तलाक दी हुई पत्नी या विधवा से विवाह करे तो यह पाप होगा।

ग. हर मुसलमान को आदेश है कि वह अपनी हर एक पत्नी से एक जैसा व्यवहार करे परन्तु पैग़म्बर जब चाहे अपनी किसी भी पत्नी को स्थगित कर सकता है।

घ. अल्लाह पैग़म्बर को प्रसन्न रखना चाहता है। वह मुसलमानों को आदेश देता है कि मुसलमान पैग़म्बर के घर कैसे जायें, कितना समय ठहरें और वहां पर व्यर्थ बातें न करें। (ख, ग और घ के आधार कुरआन की ३३:५०, ३३:५१ और ३३:५३ आयतों पर है जो कि इस प्रकार हैं।)

ऐ पैग़म्बर ! हम ने तुम्हारे लिए तुम्हारी बीवियां, जिन को तुम ने उन के मह्र दे दिए हैं, हलाल कर दी हैं और तुम्हारी लौंडियां, जो ख़ुदा ने तुम को (काफ़िरों से ग़नीमत के माल के तौर पर) दिलवायी हैं और तुम्हारे चचा की बेटियां और 'तुम्हारी फूफियों की बेटियां और तुम्हारे मामुओं की बेटियां और तुम्हारी ख़ालाओं की बेटियां, जो तुम्हारे साथ वतन छोड़ कर आयी हैं सब हलाल हैं और कोई मोमिन औरत अगर अपने आप पैग़म्बर को वख्शी दे (यानी मह्र लेने के बगैर निकाह में आना चाहे) बशर्ते कि पैग़म्बर भी उस से निकाह करना चाहें, (वह भी हलाल है, लेकिन यह इजाजत) (ऐ मुहम्मद !) खास़ तुम ही को है, सब मुसलमानों को नहीं, हम ने उन की बीवियों और लौंडियों के बारे में जो (मह्र, अदा करने के लिए जरूरी) मुकर्रर कर दिया है, हम को मालूम है (यह) इस लिए (किया गया है) कि तुम पर किसी तरह की तंगी न रहे और खुदा बख्शने वाला मेहरबान है। (५०) (और तुम को यह भी अख्तियार है कि) जिस बीवी को चाहो, अलग रखो और जिसे चाहो अपने पास रखो और जिसको तुम ने अलाहिदा कर दिया हो, अगर उस को फिर अपने पास तलब कर लो, तो तुम पर कुछ गुनाह नहीं। यह (इजाजत) इस लिए है कि उन की आंखें ठंडी रहें और वे ग़मनाक न हों और जो कुछ तुम उनको दो, उसे लेकर सब खुश रहें और जो कुछ तुम्हारे दिलों में है, खुदा उसे जानता है और खुदा जानने वाला (और) बुर्दबार (हलीम) है। (५१)

मोमिनो ! पैग़म्बर के घरों में न जाया करो, मगर इस सूरत में कि तुम को खाने के लिए इजाजत दी जाए और उस के पकने का इन्तिजार भी न करना पड़े, लेकिन जब तुम्हारी दावत की आए तो जाओ और जब खाना खा चुको, तो चल दो और बातों में जी लगा कर न बैठ रहो। यह बात पैग़म्वर को तकलीफ देती थी और वह तुम से शर्म करते थे, (और कहते नहीं थे), लेकिन खुदा सच्ची वात के कहने से शर्म नहीं करता और जब पैग़म्वर की बीवियों से कोई सामान मांगों, तो पर्दे के

बाहर मांगो। ये तुम्हारे और उन के दोनों के दिलों के लिए बहुत पाकीज़गी की बात है और तुम को यह मुनासिब नहीं कि पैग़म्बरे खुदा को तक्लीफ़ दो न यह कि उन की बीवियों से कभी उनके बाद निकाह करो। बेशक यह खुदा के नजदीक बड़ा (गुनाह का काम) है। (५३)

च. जैसे मैं अगले भागों में बताऊंगा, अल्लाह ने मुहम्मद को प्रसन्न करने के लिये पूजा करने की दिशा को बदल दिया। एक दिव्य विधान में यह महत्त्व पूर्ण परिवर्तन था।

(ऐ मुहम्मद !) हम तुम्हारा आसमान की तरफ़ मुंह फेर फेर कर देखना देख रहे हैं। सो हम तुमको उसी क़िब्ले की तरफ़, जिसको तुम पसन्द करते हो, मुंह करने का हुक्म देंगे। तो अपना मुंह मस्जिदे हराम (यानी खाना-ए-काबा) की तरफ़ फेर लो। और तुम लोग जहां हुआ करो (नमाज पढ़ने के वक्त) उसी मस्जिद की तरफ़ मुंह कर लिया करो। और जिन लोगों को किताब दी गयी है वे खूब जानते हैं कि (नया क़िब्ला) उनके परवरदिग़ार की तरफ़ से हक़ है और जो काम ये लोग करते हैं, खुदा उन से बे-खबर नहीं। (२:१४४)

छ. जब हालो (Halo) की बेटी खौला (Khaula) ने मुहम्मद को विवाह का प्रस्ताब प्रस्तुत किया तो मुहम्मद की पत्नी आइशा को यह अच्छा नहीं लगा। पर जब अल्लाह ने मुहम्मद से कहा:

"....... तुम जिस बीवी को चाहो, अलग रखो और जिसे चाहो अपने पास रखो।" (३३:५१)

तो आइशा बोली:

"....... अल्लाह तुम्हें प्रसन्न करने के लिये उत्सुक है"। (Sahih Al Bokhari Vol : 7)

ज. वास्तव में अल्लाह मुहम्मद के कार्यकर्ता के भान्ति है क्योंकि वह मुसलमानों को आदेश देता है कि वे मुहम्मद के आगे न चलें और उस से ऊंचा न बोलें।

"मोमिनो ! (किसी बात के जवाब में) खुदा और उस के रसूल से पहले न बोल उठा करो और खुदा से डरते रहो। बेशक खुदा सुनता-जानता है।

(१) ऐ ईमान वालो ! अपनी आवाज़ें पैग़म्बर की आवाज से ऊंची न करो और जिस तरह आपस में एक दूसरे से ज़ोर से बोलते हो (उस तरह) उनके सामने जोर से न बोला करो। (ऐसा न हो) कि तुम्हारे आमाल बर्बाद हों जाएं और तुम को खबर भी न हो। (२)" (४९:१-२)

यदि ध्यान से देखा जाये तो स्पष्ट है कि क़ुरआन में पहले तो मुहम्मद मनुष्य है किन्तु धीरे धीरे मूसा की भान्ति वह अल्लाह से भी श्रेष्ठ प्रतीत होता है। मुहम्मद की मनुष्य से अल्लाह समान बनने की विधि संक्षेप में इस प्रकार थी।

१. हर मुसलमान के लिये आवश्यक है कि वह अल्लाह से प्रेम करे परन्तु इतना ही पर्याप्त नहीं। जब तक कोई मुहम्मद से "अपने पिता, बच्चों और मानव जाति से अधिक प्रेम नहीं करता" वह मुसलमान नहीं। (Sahih Al Bokh., Vol : 1)

२. मुहम्मद अल्लाह की भान्ति महान है क्योंकि उसमें अल्लाह की भान्ति ९९ गुण हैं (क) जैसे अल्लाह सर्वव्यापक होने के नाते मनुष्य के समीप है उसी प्रकार "पैग़म्बर मोमिनों पर उनकी जानों से भी ज़्यादा हक़ रखते हैं ...." (३३:६)

३. आरम्भ में मुहम्मद मृत्युलोक के प्राणी की भान्ति और अल्लाह के सेवक के रूप में है पर धीरे धीरे मुहम्मद की सत्ता बढ़ती जाती है और अल्लाह की आज्ञा पालन की भान्ति मुहम्मद की आज्ञा पालन भी आवश्यक हो जाती है।

क. "कह दो कि खुदा और उसके रसूल का हुक्म मानो। (३:३२)"
"और खुदा और उस के रसूल की इताअत करो......... । (३:१३२)

ख. "और ओ आदमी खुदा और उसके पैग़म्बर की फ़रमांबरदारी करेगा, खुदा उसको जन्नतों में दाख़िल करेगा।" (४:१३)

ग. धीरे धीरे मुहम्मद अल्लाह का समाधिकारी बन जाता है।

"और किसी मोमिन मर्द और मोमिन औरत को हक़ नहीं है कि जब खुदा और उस का रसूल कोई अम्र मुकर्रर कर दे, तो वे इस काम में

अपना भी कुछ अख्तियार समझें और जो कोई खुदा और उस के रसूल की ना-फ़रमानी करे, बह खुला गुमराह हो गया ।" (३३:३६)

अपने आप को अल्लाह का समनिर्देशक बना कर मुहम्मद अपने गुणों की और प्रशंसा करता है। जैसेः

घ. और (ऐ मुहम्मद !) हमने तुम को तमाम दुनिया के लिए रहमत बना कर भेजा है।" (२१:१०७)

च. कुरआन में मुहम्मद को आदर्श व्यक्ति कहा गया है ता कि सभी मुहम्मद की आज्ञा का पालन करें।

"तुमको खुदा के पैगम्बर की पैरवी (करनी) बेहतर है, (यानी) उस शख्स की जिसे खुदा (से मिलने) और कियामत के दिन (के आने) की उम्मीद हो और बह खुदा का ज़िक्र ज्यादा से ज़्यादा करता हो। (३३:२१)

छ. पहले तो मुहम्मद में मध्यस्थता की कोई भी शक्ति नहीं थी। वह तो अपनी चहेती बेटी फ़ातिमा को बचाने में अस्मर्थ था। फिर अपनी पैग़म्बरी सिद्ध करने के लिये उसने अपनी पदवी भगवान के समान बना ली।

कि बेशक यह (कुरआन) बुलंद दर्जा फ़रिश्ते की जुबान का पैग़ाम है, (१६) जो ताकत वाला, अर्श के मालिक के यहां ऊंचे दर्जे बाला, (२०) सरदार (और) अमानतदार है।" (८१:१९-२१)

शताब्दियों से कुरआन की इस आयत का अर्थ यह माना गया है कि क़ियामत पर मुहम्मद अल्लाह के दाहिनी ओर बैठेगा। अल्लाह सब अधिकार मुहम्मद को दे देगा और मुहम्मद ही निर्णय करेगा कि कौन नरक जायेगा और कौन स्वर्ग जायेगा। **"निर्णय कर्मों के अनुसार नहीं होगा वरन् किन को मुहम्मद को कितना प्रेम था। यहूदी और इसाई सभी नरक जायेंगे।** हिन्दुओं, बौद्धों और नास्तिकों की भी यही दशा होगी। पर सब चोर, हत्यारे, बलात्कारी आदि जिन्हों ने जीवन में एक बार भी मुहम्मद का नाम प्रेम से लिया था और उसको पैगम्बर माना था स्वर्ग जायेंगे। स्वर्ग में एक एक को वासना पूर्ति के लिये सत्तर सुन्दर कुमारी कन्याएं और अनगिनत लड़के मिलेंगे और

उनका पुरुषत्व सौ गुना हो जाये गा। इस बात को सब मुसलमान मानते हैं। मैं ने कुछ बढ़ा चढ़ा कर नहीं लिखा।

ज. धीरे धीरे मुहम्मद की सत्ता अल्लाह की सत्ता से भी अधिक हो जाती है:

"खुदा और उसके फरिश्ते पैगम्बर पर दरूद भेजते हैं। मोमिनो ! तुम भी पैगम्बर पर दरूद और सलाम भेजा करो।" (३३:५६)

मुसलमान कहते तो हैं कि अल्लाह के साथ किसी और की पूजा करना महा पाप है परन्तु वास्तव में वे अल्लाह के नाम पर मुहम्मद की पूजा करते हैं।

यह अद्‌भुत बात है कि भगवान की पूजा के स्थान पर भगवान और सब देवदूत एक मनुष्य की पूजा करते हैं। इलहाम (पैग़म्बरी) का यही तो उद्देश्य है। यह स्पष्ट है कि इलहाम का उद्देश्य ही यह है फि सत्ता चाहने वाला व्यक्ति जो अपनी पूजा करवाना चाहता है अपने आप को घूम घुमा कर भगवान के रूप में प्रस्तुत करता है।

अपनी ईश्वरीय सत्ता को दृढ़ करने के लिये वह बच्चे को जन्म से ही "अल्लाह के पैग़म्बर" का पाठ पढ़वाता है। इलहाम बुद्धिनियंत्रण का सर्वोत्तम साधन है क्योंकि इस से विवेक के सब द्वार बन्द किये जा सकते हैं।

कुरआन का अल्लाह अपनी प्रशंसा करवाने को विवश है। (५९:२३-२४)

यहां पर मनुष्य नहीं अल्लाह स्वयम् ही अपनी प्रशंसा कर रहा है। विदित है कि अल्लाह अपनी प्रशंसा चाहता है। वह अपनी प्रशंसा से प्रसन्न और प्रशंसा न होने पर दुःखी होता है। अपनी प्रशंसा करवाने के लिये वह जो करता है वह तो सदाचार के विपरीत है। वह अपनी प्रशंसा करवाने के लिये स्वर्ग में सुन्दर कन्याएं और लड़के दिलाने का प्रलोभन देता है। जो भी उस से सहमत नहीं उनको नरक की अग्नि का डर दिखाता है और बार बार दोहराता है कि उस के बदले के दण्ड की कोई सीमा नहीं। वह कहता है कि जो भी उसको नहीं मानते वे सब हत्या के योग्य हैं जब तक वे अल्लाह के प्रभुत्व को स्वीकार नहीं करते।

क्या यह ही भगवान के गुण हैं ? ऐसा भगवान तो जगनिर्माता नहीं

हो सकता। यदि होता तो वह ऐसे मनुष्यों का निर्माण करता जो उसकी पूजा और प्रशंसा करते क्योंकि ऐसा न होने से वह दुःखी होता है। यदि वह स्वयम् अपने आप को ही आनन्दित नहीं रख सकता तो वह औरों को आनन्द कैसे दे सकता है ? जब उस का अपना आनन्द मनुष्य के कर्मों पर निर्भर है तो वह भगवान हो ही नहीं सकता। मुसलमानों में मुहम्मद की जनप्रियता के तीन कारण हैं।

१. मुहम्मद परिस्थितियों से लाभ उठाने में बहुत चतुर था। उस का ध्येय अरबों का साम्राज्यवाद स्थापन करना था। **लोग भूल जाते हैं कि मुहम्मद केवल पैग़म्बर ही नहीं था। वह अरब साम्राज्य का निर्माता भी था।**

२. दूसरे, मुहम्मद ने इस्लाम अपने नाम से चलाया। इस के लिये:

क) उसने अपने आप को दया का प्रतीक कहा, "दुनियां के लिए रहमत" (२१:१०७)

ख) उसने आदेश दिया कि उसकी आज्ञा का पालन अल्लाह की आज्ञा का पालन है।

ग) उस ने कहा कि वह अपने सब अनुगामियों को स्वर्ग दिला सकता है जहां वे सदा सुख और आनन्द से रहें गे। यह तो सब को बहुत पसन्द आया।

घ) **वह अत्यन्त सफल राष्ट्रवादी था। जिस प्रकार उसने सब दूसरों पर अरबों की संस्कृति ठूंसी वह अरबों के दृष्टिकोण से सराहनीय है।**

इसलाम वास्तव में अरब राष्ट्रीयता का साधन है। इस विषय पर किसी और ने व्याख्या नहीं की इसलिये मुझें इस विषय पर विस्तार से लिखना चाहिये। **इस राष्ट्रीयवाद का मुख्य साधन मुहम्मद का यह कथन था कि उस को भगवान ने मुसलमानों के लिये आदर्श व्यक्ति बना कर भेजा था।** (३३:२१)

हर मुसलमान के लिये यह अनिवार्य है कि वह मुहम्मद को आदर्श व्यक्ति मान कर सब कुछ उस की ही भान्ति करे। मुहम्मद ने अरबो के हित और दूसरे मुसलमानों के अनहित के लिये इस का बड़ी चतुरता से प्रयोग किया।

इस बात का कि मुहम्मद एक अरब साम्राज्यवादी था प्रमाण निम्नलिखित है।

१. अबू हुरैरा के कथन अनुसार जब अल्लाह ने कहा "अपने सम्बन्धियों को चेतावनी दो" तो मुहम्मद ने उच्च स्वर में कहा: "ओ कुरेशो!"

मुहम्मद ने अपने सम्प्रदाय को सर्वोच्च पदवी दी। हदीस में लिखा है: "अल्लाह ने इब्राहीम के पुत्र इस्माईल को चुना। फिर इस्माईल की संतति में से मुहम्मद के सम्प्रदाय कुरेश को चुना। कुरेश जाति में से अल्लाह ने मुहम्मद के वंश बानू हाशिम को सर्वोत्तम मान कर चुना और फिर उस में से अल्लाह ने सर्वोत्तम पुरूष मुहम्मद को चुना...."।

यहूदी अपनी जाति को भगवान की चुनी हुई सर्व श्रेष्ठ जाति मानते हैं। इसी प्रकार मुहम्मद ने अपनी जाति, सम्प्रदाय और वंश को सर्वश्रेष्ठ कहा है।

जैसे कि पहले लिखा है एक पैगम्बर को अपनी सत्ता मनवाने के लिये और अपना नाम अमर करने के लिये प्रबल राष्ट्रीय लोगों की आवश्यकता होती है। इसीलिये मुसा ने याहूवे के आधार पर यहूदी राष्ट्र का निर्माण किया था। मुहम्मद ने अल्लाह के आधार पर यह ही किया। वह अपने वंश बानू हाशिम को सर्वोत्तम पदवी देना चाहता था पर उनकी संख्या कम होने के कारण मुहम्मद ने अपने सम्प्रदाय कुरेश (जिनकी संख्या पर्याप्त थी) को महत्व दिया।

२. जिस प्रकार मूसा ने यहूदियों को भगवान की चुनी सर्वश्रेष्ठ जाति कहा उसी प्रकार मुहम्मद ने अपने सम्प्रदाय कुरेश को अल्लाह के चुने हुए सर्वश्रेष्ठ सम्प्रदाय की पदवी दी और फिर कहा:

क) "जो भी कुरेशों का मान मर्दन करेंगे अल्लाह उन को नष्ट कर देगा।" (Jame Tirmze Vol : 2)

ख) "अल्लाह, जब कुरेशों ने मुहम्मद का विरोध किया तो तुम ने उन्हें घोर यातना दी। अब उन को इसलोक और परलोक दोनों के पुण्य फल दो।" (Jame Tirmze Vol : 2)

ग) मुहम्मद के आदेश पर उसमान ने लेखकों को "कुरेशों की भाषा में" कुरआन लिखने को कहा। (Sahih Bokh. Vol : IV)

इस से स्पष्ट होता है कि कुरान कुरेशों की भाषा में है दूसरे अरब लोगों की भाषा में नहीं।

घ) केवल कुरेशों को राज करने का अधिकार होगा और कुरेशों का विरोध करने वालों को अल्लाह नष्ट कर देगा। (Sahih Bokh, Vol : IV)

च) "कुरेश क़ियामत तक राज करेंगे चाहे वे सदाचारी हों या दुराचारी।" (Sahih Tirmze, Vol : I)

छ) चाहे दो ही कुरेश बचे हों, राज करने का अधिकार उनको ही होगा। (Sahih Tirmze, Vol: I)

इन हदीसों का महत्व निम्निलिखित बातों से स्पष्ट है।

१. स्पेन में अरबों के ८०० वर्ष के राज में सभी राजा कुरेश सम्प्रदाय के थे। कारण केवल यह था कि इस्लाम में मुहम्मद के सम्प्रदाय कुरशों को ही राजा बनने का अधिकारी माना जाता था।

२. सहीह अलबूर्खरी (Sahih Alburkhri) के आठनें भाग में स्पष्ट प्रकार से कुरेशों का राजा बनने के अधिकार और दूसरे सब को इस अधिकार से वंचित रखने का उल्लेख है। किसी भी मुसलमान को जो अरब नहीं राज करने का अधिकार नहीं। स्पष्ट है कि इस्लाम जातिवादी मत है और इसमें समानता और प्रजातंत्र तो हैं ही नहीं। **आश्चर्य है कि फिर भी हिन्दुस्थान, पाकिस्तान, बंगला देश और अफ्रीका के मुसलमान अपनी संस्कृति और राष्ट्रीयता को अस्वीकार करते हैं और अपने आप को केवल मुसलमान मानते हैं।** इसीलिये उन का अपना कोई इतिहास नहीं। वे तो अरबों के इतिहास के आधार पर ही जीवित हैं चाहे वह इतिहास कितना ही घटिया क्यों न हो। मुहम्मद के देहान्त पर उसके उत्तराधिकार की समस्या गम्भीर बनी। मदीना के अनसार सम्प्रदाय ने (जिन्हों ने मुहम्मद को मदीने में शरण दी थी) मांग की कि राज्य का विभाजन हो। एक राजा अनसारों में से हो और दूसरा कुरेशों में से हो। अबू बकर ने कहा कि राज्य का उत्तराधिकारी तो कुरेश ही होगा जैसा कि मुहम्मद ने कहा था। " अनसार के लोगो-चाहे तुम कितने ही श्रेष्ठ क्यों न हो राज्य तो मुहम्मद के सम्प्रदाय कुरेशों को ही मिलेगा"।

जब समस्या कठिन प्रतीत हुई तो ओमर (Omar) ने एक चाल चली। उसने अबू बकर को अपना हाथ बढ़ाने को कहा और जैसे ही यह हुआ ओमर ने अबू बकर को अपनी राजनिष्ठा अर्पण की। इस पर मक्के के दूसरे अरबों ने भी इसको स्वीकार किया। अनसारों को इस्लाम की एकता भंग न करने के डर से कुरेशों की राज्यसत्ता को विवशता पूर्वक मानना ही पड़ा जिस से अबू बकर पहला ख़लीफ़ा बना।

स्पष्ट है कि मुहम्मद सर्वप्रथम कुरेश और उसके बाद ही अरब था। उस की राष्ट्रीयता यहूदियों की राष्ट्रीयता से भी सीमित थी। यहूदियों में तो सर्व सहमती से कोई भी राजा बन सकता था।

जाति और जन्मस्थान राष्ट्रीयता के दो प्रमुख अंश हैं। अब मैं मक्का और अरब देश के प्रति मुहम्मद के विचार पस्तुत करता हूं।

१. "जो कोई भी अरब देशों का विरोध करेगा वह मेरा प्रिय नहीं होगा और मैं उसके लिये अल्लाह से मध्यस्थता नहीं करूंगा। (Jame Tirmze, Vol : II)
२. मुहम्मद ने सुलेमान फ़ारसी (जिसने कुशलता से इस्लाम के हित में युद्ध किया था) को कहा: "यदि तुम अरबों के प्रति दुर्भाव रखते हो तो तुम मेरे प्रति दुर्भाव रखते हो।" (Jame Tirmze, Vol : II)
३. मुहम्मद ने अपने जन्मस्थान मक्के के विषय में कहा: "अल्लाह ने मक्के को संसार का सर्व श्रेष्ठ स्थान बनाया है। मुझे मक्का सारे संसार से अधिक प्रिय है।"(Jame Tirmze, Vol : II)
४. "मक्का सब से अच्छा स्थान है और मुझे सब स्थानों से अधिक प्रिय है। यदि मुझे कुरेशों ने मक्के से न निकाला होता तो मैं कहीं और न रहता।" (Jame Tirmze, Vol : II)

मुहम्मद ने मक्के और अरब देश को संसार के सर्वोच्च स्थान बनाने के लिये क्या नहीं किया। **उसने विचार किया कि इसाई कहीं का भी निवासी हो वह जेरूसलम को अपने देश से श्रेष्ठ मानता है। क्यों न मक्के को भी ऐसा ही महत्व दिया जाये जिस से सारे अरब देश का मान बढ़ जाये।**

यहूदी सदा ही अपने परिश्रम से धनी बनते थे और हर समाज में

उनका बोल बाला था। यही स्थिति अरब देश में भी थी। पहले तो मुहम्मद ने यहूदियों को अपने साथ मिलाने के लिये जेरूसलम को इस्लाम का किबला (सर्वोच्च स्थान) नियुक्त किया जिस ओर मुख कर के मुसलमान प्रार्थना करें। कुरआन मे बार बार दोहराया गया कि अल्लाह ने यहूदियों को सर्वोच्च चुना है। परन्तु इन सब बातों का परिणाम उलटा हुआ और यहूदियों ने मुहम्मद के विरुद्ध कुरेशों का साथ दिया। जब मुहम्मद विजयी हो कर मक्के लौटा तो उसने अपने सम्प्रदाय कुरेशों को तो क्षमा कर दिया परन्तु यहूदियों का तिरस्कार किया।

इस बात के बहुत प्रमाण हैं कि मुहम्मद का ध्येय यहूदियों, बिजैनटेनियों, ईरानियों और तुर्कों से भिन्न एक अरब राष्ट्र की स्थापना था। उसका समानता का संदेश तो छद्म है वास्तव में वह राष्ट्रीयता है। प्रमाण प्रस्तुत हैं :

१. मुहम्मद ने कहा कि मेरे जो भी अनुगामी पहले इस्तम्बूल पर आक्रमण करेंगे उनके सब पाप क्षमा होंगे और वे स्वर्ग जायेंगे। (Al Bokhari, Vol : IV)

   "अनुगामी" का तात्पर्य अरबों से है क्योंकि उस समय केवल अरब ही मुहम्मद के अनुगामी थे।

२. मुहम्मद ने कहा कि शीघ्र ही अरबों का तुर्कों से युद्ध होगा। (Al Bokhari, Vol : IV)

३. मुहम्मद ने कहा कि ईरान के राष्ट्रपति खुसरो और उसके कुल का विनाश कर के अरब अल्लाह के नाम पर उसकी सम्पत्ति का भोग करेंगे। उसने यह भी कहा कि "युद्ध का अर्थ ही धोखा है।" (Al Bokhari, Vol : IV)

४. महुम्मद मुसलमानों के रूप को यहूदियों और इसहिओं से भिन्न चाहता था। उस ने कहा: "यहूदी और इसाई अपने श्वेत बालों को नहीं रंगते। इसलिये तुम इन्हें रंगा करो"। (Al Bokhari, Vol : VII)

   मुसलमानों में सिर और दाढ़ो के बालों को रंगने की प्रथा इसी आदेश के कारण है।

५. मुहम्मद नहीं चाहता था कि अरब दूसरों की वेश भूषा को

अपनायें। जब मुहम्मद ने अमर (Amar) के बेटे अब्दुल्लाह को केसरी रंग के कपड़ों में देखा तो उसे ऐसे कपड़े पहनना मना कर दिया।

केसरी रंग के कपड़े हिन्दु और बुद्ध सन्त पहनते हैं। उस समय बुद्ध धर्म ईरान और अरबों में फैला हुआ था।

६. मुहम्मद की राष्ट्रीयता उसके यहूदियों से व्यवहार से स्पष्ट है।

क) यहुदियों की भाषा हिब्रू का प्रभाव कम करने के लिये मुहम्मद ने मुसलमानों को आदेश दिया कि वे केवल कुरआन (जो अरबी में था) को मानें, इंजील के कथन को नहीं। (३: ८४)

> "रोशन किताब की कसम, कि हम ने इस को अरबी कुरआन बनाया है, ताकि तुम समझो।" (४३:२-३)

इस आयत के दो भाव हैं:

१. कुरआन इस लिये अरबी में है कि अरब इसे समझ सकें। इसे दूसरे समझ सकें या न समझें इस का कोई महत्व नहीं।

२. क्योंकि कुरआन अरबी में है इस लिये अरबी ही अरबों के लिये श्रेयस्कर भाषा है। अरब देश में रहने वाले यहूदी अपने धर्म ग्रंथ को हिब्रू में पढ़ते थे और अरबी में उसको समझाते थे। मुहम्मद ने अरबों को हिब्रू का बहिष्कार करने को और अरबी को अपनी राष्ट्र भाषा बनाने को कहा।

ख) जब यहूदियों ने इस्लाम को स्वीकार नहीं किया तो मुहम्मद ने उन से अत्यन्त कड़ा व्यवहार किया।

१. मुहम्मद ने इस्लाम के किबले (सर्वोच्च स्थान) की पदवी जेरूसलम से हटा कर मक्के को दे दी। अल्लाह ने यह परिवर्तन मुहम्मद को प्रसन्न करने के लिये किया जैसा कि इस आयत में वर्णन है।

"(ऐ मुहम्मद !) हम तुम्हारा आसमान की तरफ़ मुंह फेर-फेर कर देखना देख रहे हैं। सो हम तुमको उसी क़िब्ले की तरफ़, जिसको तुम पसन्द करते हो, मुंह करने का हुक्मं देंगे। तो अपना मुंह मस्जिदे हराम (यानी खाना-ए-काबा) की तरफ़ फेर लो। और तुम लोग जहां हुआ करो (नमाज पढ़ने के वक्त) उसी मस्जिद की तरफ़ मुंह कर

लिया करो।" (२:१४४)

इस परिवर्तन का असली कारण अरबों की महत्ता की स्थापना था। दूसरे देशों के सब मुसलमानों को अल्लाह का आदेश कि वे अरबों को श्रेष्ठ स्वीकार करें। परिणाम स्वरूप सारे संसार के मुसलमान मक्के की ओर मुंह कर के प्रार्थना करते हैं। हर मुसलमान के लिये यह भी आदेश है कि यदि समर्थ हो तो जीवन में वह एक बार तो मक्के अनश्य जाये। उनके अपने देशों के धर्मस्थान मक्के से घटिया हैं।

काबा संसार के सभी स्थानों से अधिक श्रद्धा लेता है। काबे के प्रति श्रद्धा का अर्थ है अरबों के प्रति श्रद्धा। मुसलमानों का कथन है कि मुहम्मद ने पहले जेरूसलम को किबला (सर्वश्रेष्ठ धर्मस्थान) इसलिये नियुक्त किया था क्योंकि उस समय काबे में मूर्ति पूजा होती थी जिससे अल्लाह को घृणा है। इस का कोई समर्थन नहीं है। काबे को किबला (सर्वश्रेष्ठ धर्मस्थान) ६२४ ईसवी में बनाया गया था। उस समय काबे में कुरेश अल्लाह के साथ कई मूर्तियों की पूजा करते थे। केवल ६३० में जब मुहम्मद विजयी हो कर मक्के लौटा तो काबे से मूर्तियों को निकाला गया था।

कुरआन के अनुसार अल्लाह मूर्ति पूजा से (जो सब से बड़ा पाप है)घृणा करता है। फिर यह क्यों कि सर्वशक्तिमान अल्लाह एक सहस्र वर्ष काबे से मूर्तियों को निकाल न पाया और उसे मुहम्मद के आगमन की प्रतीक्षा करनी पड़ी। स्पष्ट है कि अल्लाह का अपना तो कोई अस्तित्व ही नहीं। वह तो केवल अरबों की महत्ता का साधन है। इसीलिये वह अरबों को ही अरबों में कुरआन का संदेश देता है।

ध) इंजील में यहूदियों को अरबों से श्रेष्ठ बताया गया है क्योंकि यहूदी इस्हाक़ (इब्राहीम का उसकी विवाहिता पत्नी साराह से पुत्र) की संतति हैं और अरब इस्माईल (इब्राहीम का हागर नाम की मिस्री दासी से पुत्र) की संतति हैं।

इंजील के अनुसार भगवान का समझोता (covenant) इस्माईल के साथ नहीं वरन् इस्हाक़ के साथ था। पर मुहम्मद ने कुरान में उस को उलट दिया है।

१. काबे की रचना इब्राहीम और इस्माईल ने की थी।
२. कावे में इब्राहीम और इस्माईल ने भगवान से प्रार्थना की थी कि उनकी संतति का भगवान प्रेमी राष्ट्र हो।
३. भगवान उन्हें ज्ञानग्रंथ (कुरआन) की शिक्षा के लिये पैग़म्बर (मुहम्मद) भेजे। (२:१२७-१२९) यह राष्ट्रीयता नहीं तो और क्या है जब यहूदियों के वैभव को अरबों का कह कर बताया जाये ?

इसका कोई भी ऐतिहासिक प्रमाण नहीं है कि इब्राहीम कभी भी मक्के गया था। इंजील और पुरातत्व (archaeological evidence) के अनुसार इब्राहीम ने वैथल (Bethel) नाम नगर में याह्वे के नाम पर एक पूजा स्थान वनाया था इसके पश्चात वह हैवरान (Hebron) गया। कहीं भी उसके मक्के जाने का वृत्तान्त नहीं मिलता।

इस वात का भी प्रमाण है कि इब्राहीन एक मात्र भगवान का पुजारी नहीं था। वह तो वहुतों में से "याह्वे" और "एल" को मानता था। इसी "एल" को मक्के में अल्लाह कहा जाता था और शताब्दियों से काबे में उसकी पूजा होती थी। कावे का मान वढ़ाने के लिये मुहम्मद ने अपने जन्म स्थान मक्के को सर्वोत्तम स्थान की पदवी दी।

१. कुरान में लिखा है:

"(कह दो) मुझ को यही इर्शाद हुआ है कि इस शहर मक्का के मालिक की इवादत करूं। (६१)" (२७:९)

यह अल्लाह और मक्के में विशेष सम्बन्ध जोड़ने का प्रयास है। अल्लाह पहले मक्के का स्वामी है और फिर वाकी संसार का। अल्लाह तो मुहम्मद के जन्मस्थान मक्के में रहता है।

२. कुरआन (१४:३५-३७) में इब्राहीम अल्लाह से प्रार्थना करता है कि वह मक्के को शान्ति और रक्षा का केन्द्र बनाये। वह काबे को भगवान का पावन स्थान कहता है।

३. कुरआन (५:९७) में अल्लाह काबे को सुरक्षित तीर्थस्थान नियुक्त करता है।

कुरआन तो यह भी कहता है कि इब्राहीम न तो यहूदी था और न ही इसाई। वह तो मुसलमान था (३:६७)। कुरान में एक और स्थान पर इस्लाम को 'इब्राहीम का दीन' वताया है जिसने "तुम्हारा नाम मुसलमान रखा था"। (२२:७८) अरव देश को महत्ता देने के लिये कुरआन (३:९७) मुसलमानों को कम से कम एक बार मक्के जाने को वाध्य करता है। इस को हज्ज कहतें हैं जो इस्लाम के मूल सिद्धांतों में से एक है और जिस से स्वर्ग प्राप्त होता है।

उस समय मक्का तो केवल एक वड़ा गांव था फिर भी अरबी कुरआन में उसे "नगरों की जननी" (Mother of Cities) कहा गया है। (४२:७) किसी भी और राष्ट्रवादी ने अपने देश के हित के लिये ऐसी उत्तम युक्ति नहीं निकाली। आजकल मक्के में कम से कम बीस लाख व्यक्ति प्रति वर्ष जाते हैं। इस से सॉदी अरब देश (Saudi Arabia) को ६ करोड़ पौण्ड वार्षिक आय होती है-अर्थात् हर परिवार के लिये ५,००० पौण्ड। और फिर श्रद्धा तो देखिये। साल में एक बार नहीं, मास में एक बार नही वरन् दिन में पांच बार करोड़ों व्यक्ति मक्के की ओर मुख कर के अल्लाह से स्वर्ग की याचना करते हैं।

मुहम्मद ने अपने देश और अपनी जाति को परम पावन घोषित किया। अपनी जाति का शासन स्थापित करने के लिये "जिहाद" का सिद्धांत बनाया जिस से अरब दूसरों (जो भो मुसलमान नहीं) से युद्ध करें, उनके देशों, सम्पत्ति और स्त्रियों को छीन लें और उन को अरबों के अधीन करें। जिहाद के सिद्धांत को इस प्रकार चलाया गया।

१. मुहम्मद ने यहूदियों से कहा: "यदि तुम मुसलमान बन जाओ तो तुम सुरक्षित रहो गे नहीं तो तुम को यह जानना चाहिये कि धरती अल्लाह और उसके पैग़म्बर की है और मैं तुम्हें देश से निकाल देना चाहता हूं।" (Sahih Albukhari, Vol 4)
२. संसार को अपने वश में करने के लिये सेना की आवश्यकता है, इसलिये मुहम्मद ने कहा: "स्वर्ग तो तलवारों की छाया में है"। (Sahih Albukhari, Vol 4)
३. कुरआन में मुहम्मद के अनुगामियों (मुसलमानों) को धर्मयोद्धा कहा है।

> खुदा ने मोमिनों से उन की जानें और उन के माल खरीद लिए हैं (और इस के) बदले में उन के लिए बहिश्त (तैयार की) है। ये लोग खुदा की राह में लड़ते हैं तो मारते भी हैं और मारे जाते भी हैं। यह तौरात और इंजील और क़ुरआन में सच्चा बायदा है, जिस का पूरा करना उसे ज़रूर है और खुदा से ज़्यादा वायदा पुरा करने वाला कौन है, तो जो सौदा तुम उस से किया है, उस से खुश रहो और यही बड़ी कामियाबी है। (९:१११)

स्वर्ग में किसी भी वस्तु का अभाव नहीं -- विशेष कर सुन्दर स्त्रियों और लड़कों का। यदि मुसलमान विजयी हो तो दूसरों की सम्पत्ति और स्त्रियों को छीन कर उसे भूनि पर ही स्वर्ग मिल जाता है। और यदि वह जिहाद में मारा जाये तो सीधा स्वर्ग जाता है। अूसरों का अधिकार छीनने, हत्या और लूटमार का इस से बड़ा प्रलोभन और क्या हो सकता है ?

४. जिहाद दूसरों (मुसलमानों के अतिरिक्त) के विरुद्ध हैं इसलिये मुहम्मद ने सब और मतों को झूठा कह कर जिहाद के अनगिनत अवसर बनाये।

"और जो शख्स इस्लाम के सिवा किसी और दीन का तालिब होगा, वह उससे हरगिज नहीं क़ुबूल किया जाएगा" (३:८५)

५. मुहम्मद ने दूसरे सभी मतों को झूठा कहा। "जिस भी यहूदी या इसाई ने मेरा नाम सुना है पर मूझे पैग़म्बर नहीं माना नरक जाये गा।" (Sahih Muslim Ch. LXXI).

६. मुहम्मद ने कहा कि अल्लाह ने उस को आदेश दिया है कि जब तक सब दूसरे यह स्वीकार न कर लें कि "अल्लाह ही एक मात्र भगवान है और मुहम्मद उसका पैग़म्बर है" तब तक वह उनसे युद्ध करे। इस को माने बिना किसी के प्राण और सम्पत्ति सुरक्षित नहीं हो गी। (Sahih Muslim Ch. IX)

वास्तव में यह सभी युद्ध अरब राष्ट्र के हित के लिये थे और सभी युद्धों की भांति क्रूर थे। मुहम्मद ने स्वयम् कहा था कि "युद्ध कपट है" और उसने

इस को अपनाया। इन युद्धों के कारण मुहम्मद का अपने आप को "सब पर दयालु कहना" तो ढोंग है। अल बुख़ारी के आठवें भाग में कुछ उदाहरण हैं।

१. मुहम्मद ने युरैना (Uraina) जाति के लोगों के हाथ और पांव काट दिये और उन्हें इस प्रकार मरने दिया।
२. जब उक्ल (Ukl) जाति वालों ने अपराध किये तो मुहम्मद ने उन्हें पक्ड़वा कर उनके हाथ और पांव कटवा दिये, उनकी आंखों को जलते लोहे से फुड़वा दिया। उनको पीने को पानी भी नहीं दिया जिस से वे प्यास से मर गये।
३. जो भी मुहम्मद के विरोध में लड़े उनके अंग काट दिये जिस से वे मर गये। मुहम्मद का यह व्यवहार क़ुरआन पर आधारित है।

अल्लाह और उसके पैग़म्बर के विरुद्ध लड़ने वालों का दण्ड मृत्यु, अंगों का काटना और देशनिकाला है। (५:३३) स्पष्ट है कि इस्लाम दया का सन्देश नहीं वरन दूसरों की घृणा पर निर्धारित है ता कि मुसलमान सदा दूसरों से संघर्ष और युद्ध करते रहें। जैसे:

१. यदि तुम्हारे माता, पिता, सम्बन्धी या मित्र मुसलमान नहीं थे तो उनका शोक न करो और अनकी क़ब्र के निकट भी न जाओ। (९:११३)
२. मुसलमान को किसी और (जो मुसलमान नहीं) की मित्रता नही करनी चाहिये। (The Woman : 10)
३. मुसलमान का कर्तव्य है कि वे दूसरों के विरुद्ध जिहाद और क्रूरता करें। (The forbidding : 5)
४. जहां भी कोई मूर्ति पूजक मिले उसकी हत्या करो। (९:५)
५. जहां भी मिलें दूसरों (जो मुसलमान नही) की हत्या करो। उनमें से किसी की मित्रता या सहायता न करो। (४:९१)
६. अल्लाह ने मुहम्मद को प्रेरित किया है कि वह दूसरों (जो मुसलमान नहीं) से क्रूरता का व्यवहार करे। वे मुहम्मद का सामना नहीं कर पायें गे। (३३:६०, ३३:६१)
७. अल्लाह ने दूसरों (जो मुसलमान नहीं) को श्राप दिया है और उनके लिये नरक की घोर अग्नि का आयोजन किया है। (३३:६४)

स्पष्ट है कि जैसे शताब्दियों पश्चात कार्ल मार्क्स ने सामाजिक संघर्ष (जिस में जनता की विजय निश्चित थी) पर संसार का विधान रचने का सपना देखा उसी प्रकार मुहम्मद ने मत के आधार पर संघर्ष से अरबों का प्रभुत्व स्थापित किया।

कुरआन में कुछ स्थानों पर अंतर्राष्ट्रीयता का उल्लेख है। मुसलमान इस का अर्थ नहीं समझते। महुम्मद के जीवनकाल में इस्लाम अरब देश तक ही सीमित था। कुरान में "लोगों", "आस्तिकों" और "निष्ठावालों" की व्याख्या तो केवल अरबों पर ही लागू होती है।

इस्लाम की अरब राष्ट्रीयता तो इस से स्पष्ट होती है कि कुरआन को अरबी कुरआन का नाम दिया है ता कि अरब इस के तात्पर्य को समझें।

परिवारों से सम्प्रदाय, जातियां और राष्ट्र बनते हैं। वे सब एक देश में रहते हैं एक ही भाषा बोलते हैं और पूर्वजों के रीति रिवाजों का पालन करते हैं। इन में देश का विशेष महत्व है क्योंकि उनका मान देश की स्वतन्त्रता पर निर्भर होता है। इस में सब का हित होता है जिस के कारण उन में संगठन होता है। मत और समाजवाद भी एकता के साधन हैं। यदि देश के नेता देशद्रोही या मतांध न हों तो राष्ट्र हित मतों से ऊपर उठ जाता है। उस समय अरब कई भागों में बटे हुए थे जो अपने अपने भाग के हित को देखते थे जैसा कि कुछ वर्ष पूर्व ईरान की खाड़ी के युद्ध से स्पष्ट है।

किसी देश का गौरव उसके वासियों के सदाचार से जाना जाता है। किन्तु भारत के मुसलमान राष्ट्रीयता में विश्वास ही नहीं करते। चाहे ही मुसलमानों ने इस्लाम के आधार पर १९४७ में पाकिस्तान बनवाया था, फिर भी १९७१ में बहुत रक्त पात के बाद पाकिस्तान का पूर्व भाग अलग हो गया। बाक़ी के चार प्रान्त आपस में झगड़ते रहते हैं। राष्ट्रीयता का गौरव तो है ही नहीं।

देश की श्रेष्ठता उसकी राजनैतिक या आर्थिक महत्ता से नहीं वरन् मानव सेवा से जानी जाती है। हर बलशाली राष्ट्र का कर्तव्य है कि वह बलहीन राष्ट्रों की सहायता करे। सभ्य राष्ट्र दूसरे देशों के नागरिकों को अपने देश मे आने देते हैं और आने वालों से समव्यवहार करते हैं।

मुहम्मद का राष्ट्रवाद इस्लाम पर आधारित था। हर मुसलमान को अरबो की भांन्ति कुछ विशेष अधिकार थे परन्तु वह अरबों के अधीन था क्योंकि राज्य केवल अरबों का था विशेष कर कुरेशों का। मुहम्मद ने इस्लाम का आधार अपनी महत्ता पर रखा। मुहम्मद को माने बिना अल्लाह को मानना व्यर्थ है। **सब देशों के मुसलानों के लिये मुहम्मद को आदर्श व्यक्ति मनवाना अरबों की महत्ता मनवाने का साधन है।**

याद रहे कि मुहम्मद अरब था और स्वभावतः दूसरे अरबों की भाँन्ति रहता था। पहले पहल उसका दूसरे अरबों से केवल मत भेद था। जब उसने सब अरबों से अपना मत मनवा लिया तब तो उन में कोई भी भेद नहीं रहा।

इस्लाम में मुहम्मद की इच्छा के बिना कोई भी स्वर्ग नहीं जा सकता इसलिये स्वर्ग जाने के लिये हर मुसलमान के लिये अनिवार्य है कि वह मुहम्मद की भान्ति प्रार्थना करे, रोज़े रखे, हज्ज जाये, उसकी भान्ति ही खाये, पिये, कपड़े पहने और सब कुछ मुहम्मद की भान्ति ही करे। जिन से मुहम्मद को प्रेम था उनसे प्रेम करे और जिन से मुहम्मद को घृणा थी उन से घृणा करे। सम्भवतः तुर्की को छोड़ कर इसका दूसरे मुसलमान देशों पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ा है। वे सब अपनी संस्कृति का त्याग कर अरब संस्कृति से प्रेम करने लगे हैं। मुहम्मद दूसरों (जो मुसलमान नही) से घृणा करता था। इसलिये सब देशों के मुसलमान अपने पूर्वजों (जो मुसलमान नहीं थे) से घृणा करते हैं और अरब वीरों की सराहना। मुहम्मद के इस कथन से कि मुसलमान एक राष्ट्र हैं, और दूसरे सब दूसरा राष्ट्र, मुसलमानों की एकता तो बढ़ी पर अरब और दूसरे मुसलमानों का सम्बन्ध स्वामी और सेवक सा है। दूसरे सब देशों की मस्जिदों की भी मक्के और मदीने की मस्जिदों से कम प्रतिष्ठा है। **अरबों की अधीनता से दूसरे देशों के मुसलमानों की अपने देशों के प्रति कोई निष्ठा नहीं। मुहम्मद के इस दैवी साम्राज्यवाद की इतिहास में तुलना नहीं मिलती।** जो बीस पच्चीस देश अरबों ने युद्ध में जीते थे वे अब भी अरब देश कहे जाते हैं। उन देशों के आदि वासियों का क्या हुआ? उनको तो अपने अस्तित्व से घृणा है और वे अरब कहाना चाहते हैं।

इस्लाम के नाम पर अरबों की महत्ता उन देशों पर भी लागू है जो अतीत में सभ्यता के आधार-स्तम्भ थे। मिस्र जिस का ३००० साल तक

बोल बाला था अपना अस्तित्व खो कर अरब बन गया है। बलशाली ईरानी जिनका इतिहास हज़ारों सालों का है और जिन्हों ने रोमनों को बार बार पछाड़ा था और जिन के पैग़म्बर "ज़ारातुशत्र" और "मानी" जैसे महान थे अब अरबों के परिचारक बन कर हीन हो गये हैं। एक और उदाहरण हिन्दुस्थान का है। इस देश की संसार की सभ्यता को देन सब से अधिक है। इस देश ने इस्पात (Steel) सूती कपड़े आदि के आविष्कारों से संसार की सभ्यता को बढ़ावा दिया। इसकी धर्म परम्परा से संसार भर ने सीख ली। मुसलमानों के हिन्दुस्तान पर आक्रमण से पहले यह न केवल एक स्वतंत्र देश था वरन संसार का सब से अधिक सम्पत्ति शाली देश और विज्ञान और उद्योग में सर्वोच्च देश था। मुसलमानों के आक्रमण के बाद यह देश अपनी महत्ता खो बैठा है। यद्यपि हिन्दुस्तान, पाकिस्तान और बंगलादेश में लग भग ४० करोड़ मुसलमान हैं **फिर भी उनकों अपनी जन्मभूमि पर तनिक भी गर्व नहीं और वे अपने देशों में पराये हैं।** और जब तक उनको इस बात का आभास नहीं होता कि वे अरब देशों के नहीं अपने देशों के वासी हैं वे इसी प्रकार भटकते रहें गे।

इस्लाम ने मिस्र, ईरान और हिन्दुस्तान जैसे महान देशों का नाश कर दिया है। जापान, चीन, कोरिया, टैवान आदि जिन पर मुसलमानों का कभी राज नहीं हुआ समृद्ध देश हैं। इन राष्ट्रों के वासी धरती पर स्वर्ग में रहते हैं। इसके विपरीत मुसलमान देशों के वासी स्वर्ग के सपने ही देखते हैं और अधिक कट्टर बनते जा रहे हैं। मुसलमानों मे कट्टर पंथियों के चढ़ाव का वास्तविक कारण यही है -- इस्लाम के आदेशों पर चलना नहीं (जो आधुनिक काल में कदापि सम्भव ही नहीं)। वे बिना समझे ही इस्लामी राज्य की मांग करते हैं।

मुसलमान कहते हैं कि इस्लाम जीवन का पूरा विधान है। यह सरासर झूठ है। इसीलिये संसार भर में कभी भी इस्लामी राज्य नहीं बना। यह तो इस्लाम के नाम पर जनता को मूर्ख बनाने का सत्ता चाहने वालों का नारा है। कुछ पचास साल पूर्व एक इस्लामिक राज्य स्थापित करने के लिये हिन्दुस्तान का बटवारा किया गया। अभी तक न तो इस्लामिक राज्य बना है न ही बनने की कोई आशा है और न ही किसी को पता है कि इस्लामिक

राज्य क्या होता है। यह तो सत्ता चाहने वालों का इस्लाम के नाम पर अपना उल्लू सीधा करना था।

क्योंकि मुसलमान दिन प्रति दिन और कट्टर बनते जा रहे हैं यह आवश्यक है कि इस्लाम के मुख्य सिद्धांतों की (जो आजकल निरर्थक हैं) व्याख्या की जाये।

१. इस्लाम का पहला सिद्धांत है कि राज्य भगवान का है। यह झूठ है। राज्य जनता का है। मनुष्य अपनी इच्छा से कर्म तभी कर सकता है यदि वह स्वतंत्र हो। यह तभी सम्भव है यदि राज्य जनता का हो।

२. मुसलमान कहते हैं कि: (क) इस्लामी राज्य विशेष प्रकार का है। (ख) यह राज्य पजातंत्र है।

इन दोनों कथनों का कोई आधार नहीं। जब मुहम्मद का देहान्त हुआ तो उसके उत्तराधिकार की समस्या बहुत गम्भीर बनी। यद्यपि शैया मुसलमान कहते हैं कि मुहम्मद ने अली को अपना उत्तराधिकारी नियुक्त किया था, मुहम्मद ने इस विषय पर कोई आदेश नहीं दिये थे। ऐसी विशेष बात के विषय में कोई निश्चय न होने का अर्थ है कि इस्लामी राज पद्धति नाम की कोई वस्तु है ही नहीं। ईरान से लिये हुए कुछ विधानों को तो इस्लामी राज पद्धति नहीं कहा जा सकता।

दूसरे, इस्लामी राज्य पजातंत्र नहीं क्योंकि राजा तो केवल कुरेश ही हो सकता है। पहले चार राजाओं में से अबुबक्र को चाल से चुनवाया गया। ओमर को अबुवक्र ने नियुक्त किया। ओमर अब्दुर्रहमान को नामज़द करना चाहता था। जब वह नहीं माना तो छः व्यक्तियों की समिति ने उसमान को चुना। इसको पजातंत्र तो नहीं कहा जा सकता। उसमान की हत्या पर उसके सम्प्रदाय ने अली को ख़लीफ़ा वनाया। इस के पश्चात ख़िलाफ़त राजवंशीय अर्थात् जन्म से ही हुई।

पहले चार ख़लीफ़ों के समय को इस्लाम का श्रेष्ठ समय माना जाता है। सत्य यह है कि मुहम्मद की मृत्यु के वाद ९० प्रतिशत अरवों ने ज़कात देने

ने इनकार किया और उन्हों ने मदीने पर चढ़ाई भी की। अबुबक्र ने उनको परास्त किया नहीं तो इसलाम का तभी अन्त हो जाता। पहले चार ख़लीफ़ों में से तीन का अन्त हत्या से हुआ।

यह समय श्रेष्ठ तो केवल अरबों के लिये था इस समय उन्हों ने अल्लाह के नाम पर दूसरे देशों को लूटा और उनकी बहूबेटियों को उठा कर ले आये। लूट मार सहने का दुर्भाग्य सब से पहले मिस्र और ईरान को प्राप्त हुआ।

३. मुसलमान कहते हैं कि इस्लाम समाजवादी है। यह सरासर झूठ है। इस्लाम तो यह कहता है कि अल्लाह जिसे चाहे उसे राजा बनाता है और जिन्हें चाहे उन्हें सम्पत्ति देता है चाहे वे इस के योग्य हों या न हों। इसका अर्थ तो यह हुआ कि इसलाम प्रजातंत्र और समाजवाद दोनों के ही प्रतिकूल है।

४. इस्लाम का कोई आर्थिक सिद्धांत नहीं। इस्लाम में ब्याज लेने या ब्याज देने की मनाही है परन्तु ब्याज के बिना कोई धन्धा हो ही नहीं सकता। सब मुसलमान नेता और देश ब्याज लेते हैं।

५. मुसलमानों ने जो विधान १४०० वर्ष पूर्व बनाये थे वे आजकल के संसार में उचित हैं ही नहीं। यद्यपि हिजाब (पर्दा) कुरआन के अनुसार बाध्य है फिर भी इसका पूरा पालन तो अधिकतर मुसलमान देशों में भी नहीं होता। यही व्यवस्था तलाक़ आदि सिद्धांतों की है।

६. मुसलमानों में दूसरों से घृणा करने का सिद्धांत इस्लाम को मानव अधिकारों के विपरीत सिद्ध करता है। इसी कारण मुसलमान देशों में दूसरे मतों के व्यक्ति बहुत कम हैं।

मुहम्मद ने अपने अनुगामियों को सब दूसरों (जो मुसलमान नहीं थे) को देश से निकालने का आदेश दिया था और यहूदियों को तो उसने स्वयम् निकाला था। यदि कोई मुसलमान किसी दूसरे की हत्या भी करे तो इस्लाम में यह अपराध नहीं। इस्लाम की उद्दण्डता देखिये कि हिन्दुओं के परम

पावन स्थान काशो में मस्जिद बना रखी है पर किसी को भी मक्के में गिरजा, यहूदी उपासनागृह या मन्दिर बनाने नहीं देते। क्यों कि मुसलमानों को दूसरों से मेल मिलाप करना निषिद्ध है। मुसलमान देशों की यूनाईटेड नेशनज़ (United Nations) की सदस्यता इस्लाम के अनुसार निषिद्ध है। यह अन्तर्राष्ट्रीय भाईचारे का कैसा नमूना है ?

तीसरा अध्याय

मुस्लिम संस्कृति

मुस्लिम संस्कृति का आधार दूसरों के प्रति घृणा पर है। मुसलमान देशों में दूसरों से जज़िया (विशेष कर) ले कर भेद भाव किया जाता है।

इस्लामिक संस्कृति अरब साम्राज्यवाद का विस्तार है। मुसलमान चाहे जहां पर रहता हो अपने आप को हिन्दुस्तानी, पाकिस्तानी या ईरानी आदि न कह कर अरब संस्कृति वाला मुसलमान ही कहता है। इस्लाम के नाम पर जो नहीं करना चाहिये करता है और यह भी मानता है कि मुसलमान होने के नाते दूसरों पर राज करने का उसका जन्मसिद्ध अधिकार है। इसी धारणा के कारण इस्लाम सब दूसरों के लिये आतंकवादी मत हैं।

मुसलमानों के लिये दूसरों के साथ मेल जोल निषिद्ध है चाहे वे उनके बन्धु ही क्यों न हों।

स्वेच्छाचारी शासकता की संस्कृति होने के कारण इस्लाम जनतंत्र और समानता का शत्रु है क्योंकि राज्य अल्लाह है और सब के लिये आवश्यक है कि वे अल्लाह और मुहम्मद के बनाये नियमों का बिना सोचे पालन करें। ऐसी संस्कृति अत्याचार ही फैलाती है।

अल्लाह के नाम पर लूटमार, अत्याचार, स्त्रियों का अपहरण इस्लाम की विशेषता है-- वही अल्लाह जिसे मुसलमान सर्वशक्तिमान कहते हैं पर जिसे अपनी महनता के लिये मनुष्यों की आवश्यक्ता है। वह अपने आपको परम दयालु कहता है पर जो भी मुसलमान नहीं उनकी लूटमार, हत्या, उनकी स्त्रियों का अपहरण और उन पर बलात्कार को प्रोत्साहन देता है और ऐसे पापों को पुण्य कहता है। मुसलमान ऐसे पापों को जिहाद का नाम दे कर धर्म युद्ध कहते हैं। महान देशों का आधार तो सदाचार पर है परन्तु

राष्ट्रीयता के अभाव के कारण हिन्दुस्तान, पाकिस्तान और बंगला देश के मुसलमानों को सदाचार का ज्ञान ही नहीं।

मुसलमान देशों की आर्थिक दुर्व्यवस्था ने मुसलमानों को और भी कट्टर बना दिया है। **उनके स्वार्थी नेता यह कह कर कि मुहम्मद उन्हें स्वर्ग दिलवाये गा उनकी बुद्धि पर अपना नियंत्रण रखते हैं। मुसलमानों की यह विचार धारा मानव जाति के लिये बहुत संकट कारी है।**

जो मुसलमान मुहम्मद को सब से बड़ा पैग़म्बर मानते है (अल्लाह से भी बढ़कर) उन्हें मेरे विचारों से अवश्य आपत्ति हो गी। परन्तु पैग़म्बरी धारणा ही विवेक के विरुद्ध है।

इस्लाम के अनुसार अल्लाह सृष्टि का सर्जनहार, सर्वशक्तिमान, पूर्ण और स्वतंत्र है। परन्तु क़ुरआन कहता है कि अल्लाह को प्रशंसा और पूजा करवाने की बहुत चाह है। इसलिये वह उनको जो उसकी प्रशंसा और पूजा नहीं करते अत्यन्त यातना देने का डर दिखाता है और अपनी पूजा और प्रशंसा करवाने के लिये स्वर्ग में सुन्दर कन्याओं और सुन्दर लड़कों का प्रलोभन भी देता है। ऐसा अल्लाह जिसको आनन्द के लिये मनुष्यों की स्वीकृति चाहिये तो भगवान नहीं हो सकता। फिर पैग़म्बर के विना तो अल्लाहका कोई अस्तित्व है ही नहीं। ऐसा अल्लाह स्वतंत्र मर्जनहार और पूर्ण भगवान तो हो ही नहीं सकता। पैग़म्बरी में विश्वास रखने वाले इस कठिन समस्या का समाधान पैग़म्बर को भगवान का अवतार मान कर करते हैं जैसे इसाई ईसा को पूत्र-भगवान या भगवान मानते हैं। इसी प्रकार अधिकतर मुसलमान मुहम्मद को भगवान का चहेता, सृष्टि का कारण या केवल भगवान समझते हैं। किन्तु पैग़म्बर साधारण व्यक्तियों की भान्ति जन्म लेता है, खाता है, पीता है, मल मूत्र करता है, पिता बनता हैं, बीमार होता है, बूढ़ा होता है और फिर मर जाता है। फिर वह दिव्य कैसे है ? **मुहम्मद दिव्य नहीं था। वह तो एक सम्पन्न अरब नेता था जिसने अरब साम्राज्यवाद की स्थापना की। यही उसकी सब से बड़ी सपलता थी।**

मुहम्मद अनाथ था जिसको उसके चाचा और दादा ने पाला था। किन्तु वह कुरेशी था और मक्के के काबे के स्वामी होने के नाते कुरेशों का बोल

बाला था। उन को "अल्लाह के लोग" कहा जाता था। फिर उसने एक सम्पत्ति वाली खादिजा से विवाह किया था जिसने तन मन धन से मुहम्मद की सहायता की। वह पहली थी जिस ने मुहम्मद का मत स्वीकार किया। दूसरा जिसने इस्लाम अपनाया मुहम्मद का गोद लिया बन्धु अली था। इस के पश्चात अबूबक्र था जो कि मुहम्मद का पुराना धनवान मित्र था। मुहम्मद को अपनी उच्चाकांक्षा को समर्थ बनाने के लिये सभी साधन पर्याप्त थे।

जब मुहम्मद के कथन अनुसार अल्लाह ने उसे इस्लाम फैलाने का आदेश दिया तो भी तीन साल तक उसने कोई मत प्रचार नहीं किया। आश्चर्य इस बात का है कि यदि मुहम्मद आदम से भी पहले पैग़म्बर था तो उसने ४० साल की आयु तक अल्लाह के नाम का प्रचार क्यों नहीं किया। क्या वह अपने कर्तव्य पालन में विमुख था या उसको अपने पैग़म्बर होने का ज्ञान तक नहीं था।

पैग़म्बर पन से पैग़म्बर की प्रतिष्ठा तो बढ़ती है परन्तु भगवान की प्रतिष्ठा घट जाती है क्योंकि भगवान अपनी इच्छा मनवाने के लिये पैग़म्बर पर निर्भर हो जाता है। अल्लाह को अपनी प्रशंसा और पूजा करवाने की बहुत इच्छा है। इसके लिये अल्लाह को मनुष्य की आवश्यकता है अतः पैग़म्बर भगवान से भी श्रेष्ठ वन जाता है। इस्लाम में यह स्पष्ट है। मुसलमान मुहम्मद की अल्लाह से भी अधिक प्रतिष्ठा करते हैं क्योंकि वह मानते हैं कि मुहम्मद किसी को भी स्वर्ग दिलवा सकता है परन्तु मुहम्मद की अनुमति के बिना अल्लाह यह नहीं कर सकता।

पैग़म्बर अल्लाह और मनुष्यों में मध्यस्थ बन जाता है। सभी अच्छाईयों का श्रेय लेता ही। यदि प्रस्थिति बिगड़ जाये तो उसका दोषी अल्लाह को ठहराता है क्योंकि अल्लाह की इच्छा का पालन तो अनिवार्य है। अल्लाह को सर्वज्ञ सर्वशक्तिमान और सर्व व्यापक कह कर उसके नाम पर लोगों से कुछ भी करवाता है। और फिर पैग़म्बर का मान तो इतना बढ़ जाता है कि उस के कथन को भगवान का कथन माना जाता है।

पैग़म्बर अपना प्रभुत्व जमाता है। चाहे वह अपने को भगवान का सेवक कहे वह वास्तव में भगवान माना जाता है। भगवान तो नाममात्र के लिये

होता है उसे तो केवल पैग़म्बर के द्वारा ही पाया जा सकता है। यही कारण है कि क़ुरआन में अल्लाह और मुहम्मद में कोई भेद नहीं। वे इकट्ठे ही हर वात का निर्णय करते हैं। क़ुरआन के अनुसार क़ियामत पर मुहम्मद अल्लाह के दायें ओर वैठेगा। अल्लाह तो पूर्ण नहीं और केवल अल्लाह को मानने से कोई मुसलमान नहीं वन मकता उसके साथ मुहम्मद को मानना अनिवार्य है।

बिना भगवान के पैग़म्बर तो बना नहीं जा सकता। इलहाम (revelation) शामी (semitic) प्रथा है। इसीलिये सब शामी सम्प्रदायों का अपना अपना भगवान होता था। राज तो राजा लोग करते थे परन्तु विधान को भगवान के नाम से लागू करते थे। इस से सजे ढोंग रचाते थे कि वे तो भगवान से दिये कर्तव्य का पालन करते हैं। दूसरे, एक ही भगवान मानने वालों में एकता और राष्ट्रीयता बढ़ जाती थी। जैसे आधुनिक काल में मातृभूमि राष्ट्रीयता का साधन है शामी संस्कृति में साम्प्रदायिक भगवान ही राष्ट्रीयता का साधन था। याह्वे के विना देश देश में विखरे हुए यहूदी अपनी राष्ट्रीयता को कभी भी जीवित न रख सकते।

मुहम्मद एक महान राष्ट्र का निर्माण करना चाहता था इसके लिये आवश्यक था कि वह अरवों का संगठन करे। उस समय अरव अनेक सम्प्रदायों में वटे हुए थे जिसके कारण कावे में अनेक दिव्य बुतों की पूजा होती थी जो विदेशी संस्कृति के थे जैसे कि यूनानी, रोमन, ईरानी और हिन्दुस्तानी। सव सम्प्रदायों के अपने अपने भगवान थे।

इसीलिये मुहम्मद को एक राष्ट्रीय भगवान की आवश्यकता थी। मुहम्मद को इसके पूर्वोदाहरण का भी ज्ञान था कि कैसे मूसा ने लग भग २००० साल पूर्व इस्राईली राष्ट्र स्थापित किया था। मुहम्मद को तौरात (Torah -- मूसा के लिखे हुए इंजील के पांच अध्याय) के विषय में भी जानकारी थी। नौफ़ाल का पुत्र वरका जिसने मुहम्मद के बारे मे लिखा है मुहम्मद की पत्नी ख़ादिजा का बन्धु एक विद्वान यहूदी था।

मुहम्मद ने सव कुछ मूसा की भांन्ति किया। मूसा के समय यहूदियों की दशा अत्यन्त करुणाजनक थी। मिस्र के सम्राटों का आदेश था कि यहूदियों की संख्या कम करने के लिये हर यहूदी लड़के को जन्म पर ही मार दिया

जाये। मूसा ने यहूदियों को मिस्र से मुक्ति दिलाई। यद्यपि मूसा एक योग्य योद्धा और सेनापति था फिर भी यह योग्यता एक राष्ट्र बनाने के लिये पर्याप्त नहीं थी। मिस्र का सम्राट मिस्रियों पर भगवान के प्रतिनिधि के रूप में राज करता था। इस कारण मूसा के लिये यह आवश्यक था कि वह भी दिव्य रूप प्राप्त करे ता कि वह यहूदियों को अलौकिक समर्थन का आश्वासन दे सके।

कहते हैं कि एक समय घूमते हुए मूसा ने एक झाड़ी को देखा जो जल तो रही थी पर भस्म नहीं होती थी। **उसने आकाशवाणी सुनी। आकाशवाणी भगवान की थी – इब्राहीम, इस्हाक़ और याक़ूब (Jacob) के भगवान की। आकाशवाणी ने मूसा को आदेश दिया कि वह यहूदियों को मिस्र से मुक्ति दिलाये। इस प्रकार मूसा यहूदियों का समर्थक (Champion) बन गया।** यहूदियों की मुक्ति ने उनके भगवान याह्वे के सामर्थ्य का प्रमाण दिया जिसने मूसा को मिस्र के सम्राट पर विजयी किया। इस प्रकार यहूदियों को विश्वास हो गया कि याह्वे सर्वशक्तिमान है और वह सारी सृष्टि का स्वामी है।

पूर्व काल में सभी लोग मूर्ति पूजा करते थे। मूसा ने पूजा के एक नये ढंग का आविष्कार किया। उसने कहा कि याह्वे निराकार है इसलिये उसकी मूर्ति बनाई ही नहीं जा सकती। उसने मूर्ति पूजा का निषेध कर दिया। उसने याह्वे को ईर्षालू और बदला लेने वाले भगवान का रूप दे कर सब यहूदियों को डर से एकमात्र याह्वे का पूजक बनाया। याह्वे की सर्वश्रेष्ठता प्रमाणित करने के लिये सिनाई पर्वत के चमत्कार का वर्णन किया।

तौरात (Torah) को सब यहूदियों पर लागू करने के लिये मूसा ने याह्वे से यहूदियों के समझोते (Covenant) का सहारा लिया जो मूसा के कथन अनुसार मूसा ने याह्वे से सिनाई पर्वत पर किया था। इसके अनुसार मूसा उसी प्रकार याह्वे का पैग़म्बर था जिस प्रकार मूसा से पहले इब्राहीम, नूह, याक़ूब आदि सब याह्वे के पैग़म्बर थे और जिन का कर्तव्य जनता से याह्वे की आज्ञा पालन करवाना था।

इस्लाम को इब्राहीम का मत घोषित करने से मुहम्मद यहूदियों की सभी

प्रथाओं को अपनाने में सफल हो गया। वह यहूदियों को अपने साथ मिलाना चाहता था पर जब उसने देखा कि यहूदी अपने मत पर पक्के हैं तो उसने एक मात्र अरब राष्ट्र बनाने का निश्चय किया। इसके लिये यहूदियों की प्रथा के अनुसार:

१. उसने अरबों का एकमात्र भगवान बनाना चाहा जिसकी सब अरब पूजा करें।

२. वह पैग़म्बर बनना चाहता था जो जनता और भगवान के बीच एकमात्र मध्यस्थ हो।

३. उसकी इच्छा थी कि जिस प्रकार यहूदियों का धर्मग्रंथ तौरात (Torah) है उसी प्रकार अरबों का अरबी में धर्मग्रंथ हो।

४. अरबों का पृथक राष्ट्र बनाने के लिये वह अरबों को आश्वासन देना चाहता था कि **भगवान का समझौता (covenant) इब्राहीम और इस्माईल से था न कि इब्राहीम और इस्हाक़ से जैसा कि यहूदी मानते है।** (इस्माईल अरबों का पूर्वज था और इस्हाक़ यहूदियों का पूर्वज था)। यह अरब राष्ट्रवाद के लिये आवश्यक था।

५. **अरब संस्कृति को इस्लाम का भाग बना कर उसे दूसरे मूसलमानों की संस्कृतियों से उच्चतर पदवी दी जाये।**

६. इस्लाम की अन्तर्राष्ट्रीयता केवल ऐसी हो जो अरबों को पसन्द हो।

७. मूसा की भान्ति मुहम्मद ने भी अपना लक्ष्य पूरा करने के लिये युद्ध को साधन बनाया।

अरबों को युद्ध पर तत्पर करने के लिये उसने लूटमार को पुण्य बताया जिस से मुसलमानों को स्वर्ग मिलेगा जिसमें उनको वासना पूर्ति के लिये अनेक कन्यायें और सकुमार मिलेंगे। मुहम्मद ने दूसरे देशों के लूट को जिहाद का नाम दिया जिस से मुसलमान जीवन में सब सम्पत्ति और मृत्यु पश्चात स्वर्ग पायेंगे।

उपर्लिखित कथन बिलकुल सत्य हैं। यह सब अरब राष्ट्रीयता के लिये

था। मुहम्मद ने इस्लाम अपने प्रभुत्व पर चलाया और जन समुदायों को इस प्रकार बांटा।

(क) मुहम्मद सर्वश्रेष्ठ व्यक्ति है।
(ख) उसका वंश "बानू हाशिम" वंशों में सर्वश्रेष्ठ है।
(ग) उसका सम्प्रदाय "कुरेश" सम्प्रदायों में सर्वश्रेष्ठ है।

मैं ने इन के सर्मथन में पहले ही हदीस (Hadith) से प्रमाण दिये हैं। क्योंकि मुहम्मद के अनुसार कुरेश अरबों में सर्वश्रेष्ठ थे **अरब सब से श्रेष्ठ हुए। क्योंकि राज करने का अधिकार केवल कुरेशों को था (जो अरब थे) इस लिये अल्लाह की इच्छा से सारे संसार का भाग्य अरबों के हाथ में था।**

१. मुहम्मद ने "अल्लाह" को इस्लाम का भगवान क्यों चुना?

अल्लाह कुरेशों का भगवान था जिसकी मूर्ति की पूजा काबे में की जाती थी। काबे पर कुरेशों का अधिकार था अर्थात् अल्लाह मुहम्मद के सम्प्रदाय का भगवान था।

अल्लाह के एक मात्र होने को सिद्ध करने के लिये मुहम्मद ने दूसरी सब मूर्तियों का खण्डन तो किया ही पर अल्लाह की मूर्ति को भी तोड़ा। अल्लाह को निराकार और सर्वशक्तिमान बना कर मुहम्मद अल्लाह की भान्ति दिव्य बन गया क्योंकि अल्लाह केवल मुहम्मद से ही वार्तालाप करता था। कुरआन में स्पष्ट लिखा है:

> और किसी मोमिन मर्द और मोमिन औरत को हक नहीं है कि जब ख़ुदा और उस का रसूल कोई अम्र मुक़र्रर कर दे, तो वे इस काम में अपना भी कुछ अख्तियार समझें और जो कोई ख़ुदा और उस के रसूल की ना-फ़रमानी करे, बह खुला गुमराह हो गया। (३३:३६)

स्पष्ट है कि अल्लाह और मुहम्मद में कोई अन्तर नहीं क्योंकि उनके सभी निर्णय सांझे हैं और एक की आज्ञा न मानना दूसरे की आज्ञा न मानने के बराबर है।

यहूदियों के समान अरबों को भी संगठन के लिये अपने एक मात्र भगवान की आवश्यकता थी। मुहम्मद ने केवल यह ही नहीं किया। याह्वे

तो केवल यहूदियों का भगवान था। **मुहम्मद ने अल्लाह को सारी सृष्टि का भगवान बना कर अरब संस्थाओं और संस्कृति को ऊंची और पावन पदवी दी। परिणाम यह हुआ कि मुसलमानों को अरब संस्कृति और अरब संस्थाओं (जिन में काबा भी था) को उच्च मानना पड़ा।**

इस की विशेषता एक उदाहरण से स्पष्ट होगी। ज़ीअन (Zion) नामक एक नगर को दाऊद ने आज से ३००० साल पहले जैबुज़ीटो से जीता था। यह नगर उस टीले पर था जिसपर उपरान्त काल में जेरुसलम बसा। इंजील के पहले भाग में ज़ीअन (Zion) का उल्लेख १५२ बार है जिस से अब ज़ीअन को जेरुसलम ही माना जाता है। यद्यपि अब जेरुसलम को पावन माना जाता है फिर भी यहूदी ज़ीअन को अधिक महत्व देते हैं। इसका कारण यह है कि याह्वे ज़ीअन में रहता है (Isa. 24:32) और याह्वे ने ज़ीअन (Zion) में ही दाऊद को राज्य दिया था (Ps. 2 : 6) । यद्यपि बैबिलोनियों ने लग भग २,५०० वर्ष पूर्व जैरुसलम को नष्ट कर दिया था फिर भी यहूदी कभी भी ज़ीअन (Zion) को नहीं भूले (Ps. 137) । इस प्रकार ज़ीअन (Zion) यहूदियों के राष्ट्र का चिन्ह बन गया है। इसी कारण यहूदी अपना राष्ट्र केवल फ़िलिस्तीन (Palestine) में ही बनाना चाहते थे।

प्रायः सभी यहूदी एक ही वंशावली के हैं। वे लोग जिन्हों ने यहूदी मत को बाद में अपनाया बहुत थोड़े हैं परन्तु वे भी जेरुसलम की पावनता के कारण उस को अपनी मातृभूमि से श्रेष्ठ मानते हैं।

अब मुहम्मद की राष्ट्रीयता सहल ही समझी जा सकती है। मक्के के एक छोटे से धर्मस्थान काबे का अरबों में उतना ही महत्व था जितना यहूदियों में जेरुसलम का था। सारे अरब से लोग काबे की यात्रा करने आते थे। क्योंकि काबे पर कुरेशों का अधिकार था इस लिय अल्लाह को (जिस की मूर्ति की काबे में पूजा की जाती थी) काबे का स्वामी कहा जाता था। मुहम्मद ने काबे को इस्लाम का परम पावन तीर्थ स्थान बनाया। पहले तो उसने मक्के को "महान नगर" (Mother of Cities) का नाम दिया यद्यपि मक्का केवल एक बड़े गांव के समान था फिर उसे यह कह कर परम पावन पदवी दी:

''और जब इब्राहीम और इस्माईल बैतुल्लाह की बुनियादें ऊंची कर रहे थे ....(२:१२७)

यहूदियों के पूर्वज इब्राहीम (जिसको भगवान ने ''निपुण'' बनाया था) की हंजील में बहुत प्रशंसा की गई है। यह कह कर कि काबे की स्थापना इब्राहीम और मुहम्मद के पूर्वज इस्माईल ने की थी मुहम्मद ने काबे को एक दिव्य राष्ट्रीय स्थान की पदवी दी।

कुरआन के अनुसार काबा परम पावन मस्जिद है और कुरान में मुसलमानों को आदेश है कि वे काबे की ओर मुख कर के अल्लाह का पूजन करें। इसलिये संसार के लग भग १०० करोड़ मुसलमान दिन में पांच पांच बार काबे को ही प्रणाम करते हैं।

कुरआन मे यह भी लिखा है:

''पहला घर जो लोगों (के इबादत करने) के लिए मुक़र्रर किया गया था, वही है जो मक्के में है, बरकत वाला और दुनिया के लिए हिदायत। और लोगों पर ख़ुदा का हक़ (यानी फर्ज़) है कि जो इस घर तक जाने की कुदरत रखे, वह इसका हज करे। (३:९६, ३:९७)

हर मुसलमान का कर्तव्य है कि यदि उसका सामर्थ हो तो वह मक्के अवश्य जाये। यदि वह मक्के का हज्ज नहीं करे गा तो नरक जायेगा और यदि वह मक्के का हज्ज करे गा तो अवश्य ही स्वर्ग जा कर सुन्दर सुकुमारियों का भोग करे गा चाहे वह चोर, डाकू, हत्यारा और बलात्कारी ही क्यों न हो।

इसी काबे और स्वर्ग के सम्बन्ध के कारण हिन्दुस्तान, पाकिस्तान, बंगलादेश इत्यादि देशों के मुसलमान अपनी मातृभूमि का अस्तित्व भुला कर अपने आप को केवल मुसलमान कहते हैं। वे यह भूल जाते हैं कि अरब राष्ट्रीयता के कारण वे अपने देशों की धरोहर का परित्याग करते हैं। यह बुद्धि नियन्त्रण की चरम सीमा है।

काबा मक्के की बड़ी मस्जिद के भीतर एक छोटा सा धर्मस्थान है। हाजी काबे की ७ बार परिक्रमा करते हैं और उसमें रखे हुए एक काले पत्थर को चूमते हैं। मुसलमान मानते हैं कि यह काला पत्थर भगवान ने आदम को स्वर्ग से निकालते समय दिया था। **यह ऐतिहासिक सत्य है कि अपना मत चलाने**

के आरम्भ में मुहम्मद ने काबे को कोई महत्ता नहीं दी थी। यह तो तभी हुआ जब यहूदी उसके अनुगामी नहीं बने। तब मुहम्मद ने जेरुसलम से हटा कर काबे को इस्लाम का किबला (सर्वश्रेष्ठ स्थान) घोषित किया।

काबे जाने की और काले पत्थर को चूमने की प्रथा इस्लाम से पहले की है जिस समय को कुरआन में अज्ञान का समय कहा गया है। इस "अज्ञान के समय" की प्रथाओं को इस्लाम में रखने से मुहम्मद की राष्ट्रीयता और इस्लाम के वास्तविक तात्पर्य का पता चलता है।

जन्म भर और मृत्यु के पश्चात भी हर मुसलमान काबे का सम्मान करता है। जीवन भर वह काबे की ओर मुख कर के ममाज़ पढ़ता है और मृत्यु के पश्चात उस के शब को काबे की ओर मुख कर के गाड़ा जाता है। मुहम्मद ने कैसे अपने जन्म स्थान मक्के को दूसरे देशों के मुसलमानों के लिये उनकी मातृभूमि से ऊंची पदवी दी है ?

आरम्भ में मुसलमानों का किबला (सर्व श्रेष्ठ स्थान) जेरुसलम था। काबे को यह पदवी किस ने दी ? कुरआन में लिखा है किः

> (ऐ मुहम्मद !) हम तुम्हारा आसमान की तरफ़ मुह फेर-फेर कर देखना देख रहे हैं। सो हम तुमको उसी क़िब्ले की तरफ़, जिसको तुम पसन्द करते हो, मुंह करने का हुक्म देंगे। तो अपना मुंह मस्जिदे हराम (यानी खाना-ए-काबा) की तरफ़ फेर लो। और तुम लोग जहां हुआ करो (नमाज पढ़ने के वक़्त) उसी मस्जिद की तरफ़ मुंह कर लिया करो। (२:१४४)

> और तुम जहां से निकलो (नमाज में) अपना मुंह मस्जिदे मोहतरम की तरफ़ कर लिया करो। बे-शुबहा वह तुम्हारे हरबरदिगार की तरफ़ से हक़ है। और तुम लोग जो कुछ करते हो, ख़ुदा उससे बे-ख़बर नही। (२:१४९)

उपर्लिखित आयतों से यह ज्ञात होता है कि अल्लाह ने काबे को सर्वश्रेष्ठ धर्मस्थान मुहम्मद को प्रसन्न करने के लिये बनाया था अर्थात् अल्लाह का अपना कोई भी संकल्प नहीं। मत का सर्वश्रेष्ठ स्थान बनाना तो भगवान के हाथ होना चाहिये। **इस में पैग़म्बर (जो मनुष्य है) का हाथ नहीं होना चाहिये यदि एसा हो तो पैग़म्बर अपने आप को अल्लाह के रूप में प्रस्तुत करता है।**

जो कुछ मैं ने पहले लिखा है उस से स्पष्ट है कि "अल्लाह" काबे में स्थित एक मूर्ति का नाम था उसमें प्राण तो मुहम्मद ने डाले थे। इसलिये अल्लाह ने मुहम्मद का निर्माण नहीं किया था वरन् मुहम्मद ने अल्लाह का निर्माण किया था। इसी लिये अल्लाह को मुहम्मद की हर इच्छा का पालन करना पड़ता है।

जिस प्रकार याह्वे ने जेरुसलम को यहूदियों का सर्वश्रेष्ठ स्थान बना कर उसे संसार में उच्च स्थान प्रदान किया उसी प्रकार काबे को मुसलमानों का श्रेष्ठ स्थान बना कर संसार के मुसलमानों में अरबों की महत्ता स्थापित की गई।

मुहम्मद जानता था कि यहूदियों का कट्टर राष्ट्रवाद उन के धर्मग्रंथ तौरात (Torah) के आधार पर था। यहूदी मूसा की लिखी हुई तौरात (Torah) को दिव्य ग्रंथ मानते हैं और यह ही यहूदियों की राष्ट्रीयता का एक मूल सिद्धांत है।

अरबों को भी तो यहूदियों की भान्ति एक दिव्य ग्रंथ की आवश्यकता थी जिस से उन में संगठन हो। क़ुरआन यह ग्रंथ था। मुहम्मद के अनुसार क़ुआन में कुछ भी नई बात नहीं थी। यह तो वही सन्देश था जो अल्लाह ने आदम को दिया था और जिस सन्देश को आदम ने अपनी संतति को दिया था। क़ुरआन में लिखा है:

> "ख़ुदा ने आदम और नूह और इब्राहीम के ख़ानदान और इम्रान के ख़ानदान को तमाम दुनिया के लोगों में चुन लिया था।" (३:३३)
>
> "सब को हिदायत दी और पहले नूह को भी हिदायत दी थी और उनकी औलाद में से दाऊद और सुलेमान और अय्यूव और यूसुफ़ और मूसा और हारून को भी और हम नेक लोगों को ऐसा ही बदला दिया करते हैं। (६:८४)

स्पष्ट है कि यह परम्परा थी कि अल्लाह समय समय पर अपने पैग़म्बरों (आदम, नूह, यूसुफ़, मूसा इत्यादि) द्वारा पथप्रदर्शन करता था। यह पथ प्रदर्शन धर्म ग्रंथों द्वारा किया जाता था (जैसे कि इंजील द्वारा)। किन्तु मुहम्मद ने घोषित किया कि अल्लाह ने इस परम्परा को समाप्त कर दिया है और मुहम्मद को अन्तिम पैग़म्बर बनाया है (३३:४०)। यदि अल्लाह आदिकाल

से अब तक पथप्रदर्शन करता आया है तो उसे भविष्य में भी अन्त काल तक पथप्रदर्शन करना चाहिये।

मुहम्मद ने कहा कि दूसरे धर्मग्रंथ (तौरात और इंजील Torah & Bible) लोगों का पथ प्रदर्शन नहीं कर सकते क्योंकि यहूदियों और इसाईओं ने उन्हें भ्रष्ट कर दिया था। यह तो केवल क़ुरआन ही कर सकता था क्योंकि अल्लाह ने स्वयम् क़ुरआन के सत्य होने का आश्वासन दिया है और इसे कभी भी भ्रष्ट नहीं होने दे गा। आश्चर्य है कि अल्लाह ने अपने पहले धर्मग्रंथों की रक्षा तो नहीं की पर क़ुरआन की रक्षा का दायित्व ले लिया।

इसका केवल एक ही कारण है। मुहम्मद क़ुरआन को अरबों की राष्ट्रीयता का साधन बनाना चाहता था इसलिये उसने अरबों में लिखे क़ुरआन को महत्व दिया।

> ''(खुदा, जो) निहायत मेहरबान, (१) उसी ने क़ुरआन की तालीम फ़रमायी, (२) उसी ने इंसान को पैदा किया। (३) उसी ने उस को बोलना सिखाया।'' (५५:१-३)

कुरान के अरबी भाषा में होने को महत्व दे कर मुहम्मद ने कुरआन और अरबी राष्ट्रीयता के सम्बन्ध की पुष्टि की है।

> ''हमने इस क़ुरआन को अरबी में पेश किया हैं, ताकि तुम समझ सको।'' (१२:२)

दूसरे देशों के मुसलमान कहते हैं कि क़ुरआन सारी मानव जाति के लिये दिव्य संदेश है। वास्तव में कुरआन अरबी भाषा में अरबों के लिये लिखा गया था जिसका मुख्य उद्देश्य अरब राष्ट्रीयता को बढ़ावा देना था। उदाहरणतथा:

> ''यह किताव (खुदा-ए) रहमान व रहीम (की तरफ़) से उतरी है। (२) (एसी) किताब जिस की आयतें खुले (मतलब वाली) हैं; (यानी) क़ुरआने अरबी उन लोगों के लिए है जो समझ रखते हैं।'' (४१:२-३)

फिर इस बात की पुष्टि की गई है कि क़ुरआन अरबों के लिये है।

"रोशन किताब की क़सम, (२) कि हम मे इस को अरबी क़ुरआन बनाया है, ताकि तुम समझो। (३)और यह बड़ी किताब (यानी लौहे महफ़ूज) में हमारे पास (लिखी हुई और) बड़ी फ़जीलत और हिक्मत वाली है। (४) भला इस लिए कि तुम हद से निकले हुए लोग हो, हम तुम को नसीहत करने से बाज रहेंगे।" (४३:२-५)

इस से स्पष्ट है कि क़ुरआन का सन्देश अरबों के लिये है यद्यपि मुल्ला लोग इस को मानव जाति के लिये बताने का बहुत प्रयास करते हैं।

क़ुरआन में यह भी लिखा है:

"और इसी तरह तुम्हारे पास अरबी क़ुरआन भेजा है, ताकि तुम बड़े गांव (यानीं मक्के) के रहने बालों को और जो लोग उस के इर्द-गिर्द रहते हैं, उन को रास्ता दिखाओं।" (४१:७)

इस आयत में स्पष्ट लिखा है कि क़ुरआन का संदेश मक्के और उस के इर्द-गिर्द रहने वालों के लिए है। क्योंकि केवल अरब ही मक्के के आस पास रहते थे इसलिये इन आयतों से यह स्पष्ट होता है कि क़ुरआन एक अरबी ग्रंथ है जो अरबों के लिये है। इस को मानव जाति का ग्रंथ कहने का तात्पर्य यह है कि जो भी क़ुरआन में विश्वास रखते हैं वे अरबों की महता कों भी स्वीकार करें।

क़ुरआन ही एक ऐसा ग्रंथ है जिस में बार बार संसार में मनुष्यों के अतिरिक्त मनुष्यों जैसी क्षमता वाली किसी और जाति (मनुष्यों से भिन्न) का वर्णन है। जिन्नों को किसी ने कभी देखा तो नहीं परन्तु मुल्ला लोगों का कथन है कि क़ुरआन में सूक्ष्म जीवों (Microbes) को जिन्न कहा गया है। ये मुल्ला तो क़ुरआन का निरादर करते है क्योंकि क़ुरआन जैसा ग्रंथ लिखने के लिये बुद्धि चाहिये जो कि सूक्ष्मजीवों (Microbes) में नहीं।

यह सिद्ध करने के लिये कि इस्लाम अरब राष्ट्रीय आन्दोलन है मैं मुख्य बातों को दोहराता हूं।

१. मुहम्मद ने कहा था कि वह सर्वोत्तम व्यक्ति है, उसका सम्प्रदाय कुरेश सर्वश्रेष्ठ सम्प्रदाय है और अरब सब जातियों में श्रेष्ठ हैं।

२. इसके लिये मुहम्मद ने इलहाम (revelation) की पुरानी शामी प्रथा से काम लिया और स्कयम् पैगम्बर बन गया जिसका अपना कोई स्वार्थ नहीं। वह तो केवल भगवान की आज्ञा का पालन करता है।

३. जैसे यहूदियों का राष्ट्रीय भगवान याह्वे थे, मुहम्मद ने उसी प्रकार काबे के स्वामी "अल्लाह" को जो उसके सम्प्रदाय कुरेशों का भगवान था चुना और उसे सृष्टि का एक मात्र भगवान घोषित किया।

४. मुहम्मद ने अरबों के काबे को इस्लाम का सर्वश्रेष्ठ धार्मिक स्थान घोषित किया ता कि हर मुसलमान अरबों और अरब देश की महत्ता को स्वीकार करे।

५. मुहम्मद ने हज्ज (काबे की तीर्थयात्रा) की पुरानी प्रथा को इस्लाम का मूल सिद्धांत बनाया जिस से दूसरे देशों के मुसलमान अरब को पावन मानें और जिस से अरबों की आय का साधन बना रहे।

६. मुहम्मद ने कहा कि भगवान का समझोता इब्राहीम और इस्हाक़ से नहीं वरन् इब्राहीम और इस्माईल से था। सब जानते हैं कि अरब इस्माईल की संतति हैं। स्पष्ट है कि इस्लाम का उद्देश्य अरबों की महत्ता स्थापित करना है।

७. अरबों की राष्ट्रीय महत्ता स्थापित करने के लिये काबे का महत्व यहूदियों के जेरुसलम से कहीं अधिक है। इस से अरबों की राष्ट्रीयता तो स्थापित होती ही है और यह भी कि दूसरे देशों के मुसलमान अपनी राष्ट्रीयता को छोड़ कर केवल मुसलमान कहलाना चाहते हैं। वे जान बूझ कर स्वर्ग पाने के प्रलोभन से अरबों के परिचारक बन गये हैं। याद रहे कि अरबों से शत्रुता करने बालों को मुहम्मद स्वर्ग नहीं दिलवायेगा।

मुहम्मद ने कहा था:

(क)"जो लोग कुरेशों (मुहम्मद का सम्प्रदाय) के शत्रु हैं अल्लाह उन्हें नष्ट कर देगा।" (Sahih Tirmzi Vol. 2 Pg. 835)

(ख)मुहम्मद ने सुलेमान फ़ारसी (ईरानी जो मुसलमान बन गया

था) से कहा: "यदि तुम अरबों के विरोधी हो तो तुम मेरे विरोधी हो।"- (Sahih Tirmzi Vol. 2 Pg. 840)

(ग) मुहम्मद ने कहा: "जो लोग अरबों से अच्छा व्यवहार नहीं करते और जो ऐसे लोगों से प्रेम रखते हैं मैं उनका मध्यस्थ नहीं बनूंगा। (Sahih Tirmzi Vol. 2 Pg. 840)

इन हदीसों (Hadiths) (मुहम्मद के कथनों) को सभी लोग सत्य नहीं मानते परन्तु यदि ये सत्य नहीं तो इनका कभी से बहिष्कार कर दिया जाता। इनके सत्य होने का प्रमाण इनका मुसलमानों का अरब लोकाचार के अनुकूल होना है।

८. मुहम्मद ने इस्लाम में यह कह कर अपने आप को परम पावन पदवी दी कि:

(क) वह मनुष्यों और भगवान में मध्यस्थ है।

(ख) वह संसार के लिये भगवान का उपहार है। और

(ग) वह संसार के लिये आदर्श व्यक्ति है।

मुहम्मद अरबों से प्रेम करता था इसलिये अरबों के प्रति श्रद्धा इस्लाम का मूल सिद्धान्त है।

९. मुसलमान होने के लिये अल्लाह और मुहम्मद दोनों को मानना आवश्यक है जैसे इसाई होने के लिये इसाईओं के त्रिदेव (Trinity) सिद्धान्त को मानना। केवल मुहम्मद को ही नहीं, काबे के स्वामी अल्लाह को भी जो अरबों की एक मूर्ति था। अतः इस्लाम का अभिप्राय अरबों की महत्ता स्थापित करना है।

१०. क़ुरआन अरबी ग्रंथ है। इसका मुख्य अभिप्राय अरबों का मार्गदर्शन है। इसको समस्त मानव जाति का ग्रंथ कहना दूसरे देशों के मुसलमानों को अरबों की राष्ट्रीयता के अधीन करना है।

यह सब अरब राष्ट्रवाद का आधार हैं कुछ जातिवाद पर निर्भर हैं और कुछ चमत्कारिक हैं। अरब राष्ट्रवाद की नींव रख कर मुहम्मद अरब सम्राज्य स्थापित करने के लिये एक शक्तिशाली सेना का निर्माण करना चाहता था।

इसके लिये उसने जिहाद का आविष्कार किया। **जिहाद क्या है ? जिहाद मुसलमानों को अल्लाह का आदेश है कि वे सब दूसरों को समाप्त करें। चाहे उन्हों ने मुसलनमानों को कोई हानि न पहुंचाई हो। उनका दोष तो केवल यह है कि वह मुसलमान नही।**

"मुझे अल्लाह ने क़ाफ़िरों (जो मुसलमान नहीं) से युद्ध करने का आदेश दिया है जब तक वे अल्लाह और उसके पैग़म्बर पर विश्वास नहीं लाते और इस्लाम के विधानों का पालन नहीं करते। तभी उनके जीवन और उनकी सम्पत्ति सुरक्षित होगी"। (Sahih Tirmzi Vol 2, pg. 192)

क़ुरआन की निम्नलिखित आयतों में यह बताया गया है कि मुसलमानों को क्यों दूसरों पर आतंक कर के उन्हें नष्ट करना चाहियें।

> "खुदा ने मोमिनों से उन की जानें और उन के माल खरीद लिए हैं (और इस के) वदले में उन के लिए बहिश्त (तैयार की) है। ये लोग खुदा की राह में लड़ते हैं तो मारते भी हैं और मारे जाते भी हैं। यह तौरात और इंजील और क़ुरआन में सच्चा वायदा है, जिस का पूरा करना उसे ज़रूर है और खुदा से ज़्यादा वायदा पूरा करने बाला कौन है, तो जो सौदा तुम उस से किया है, उस से खुश रहो और यही बड़ी कामियावी है।" (९:१११)

स्पष्ट है कि जिहाद अल्लाह और मुसलमानों में समझोता है। अल्लाह मुसलमानों को सव दूसरों को लूटने और मारने के पुरस्कार में स्वर्ग देने का वचन देता है। इसलिये इस्लाम में लूटमार और हत्या पावन कर्तव्य हैं जिन का महान पुरस्कार स्वर्ग है। क़ुरआन दूसरों (जो मुसलमान नहीं) की लूट मार और हत्या को उचित ठहराता है।

> "पैग़म्वर को मुनासिब नहीं कि उसके क़ब्जे में क़ैदी रहें, जब तक (काफ़िरों को क़त्ल कर के) ज़मीन में कसरत से खून (न) बहा दे। तो गनीमत का जो माल तुम को मिला है, उसे खाओ (कि बह तुम्हारे लिए) पाक-हलाल (है) और खुदा से डरते रहो। बेशक खुदा बख्शने वाला मेहरबान है। (८:६७, ८:६९)

अल्लाह को न मानने बालों पर आक्रमण कर के पहले तो बहुतों का

हत्या करने, फिर उन की सम्पत्ति और स्त्रियों को छीनने का नाम जिहाद है। इस्लाम में मुसलमानों का जन्म सिद्ध अधिकार है कि वे लूट का जैसे चाहें प्रयोग करें।

मानव जाति के प्रति ऐसे व्यवहार को सदाचार कैसे कहा जा सकता है ? इसी लिये मैं इस्लाम को आतंकवाद कहता हूं। मुसलमान अपने देशों में तो दूसरों को मानव अधिकार नहीं देते परन्तु दूसरों के देशों में मानव अधिकार मांगते हैं। "यह कहना भी कि मुसलमान देशों में इंजील के अनुगामी यहूदियों और इसाईओं को मुसलमानों के समान अधिकार हैं केवल कल्पना है"।

सर्वशक्तिमान अल्लाह दूसरों (जो मुसलमान नहीं) को मानव अधिकार देने का विरोधी क्यों है ? कारण यह है कि मुहम्मद अरबों की सत्ता (जो बेज़ैन्टीन और ईरान के गौरव के सम्मुख फीकी थी) बढ़ाने के लिये एक अरब साम्राज्य की स्थापना करना चाहता था। बज़ैन्टीनी और ईरानी अपने राष्ट्रों के लिये सदा युद्ध को तत्पर रहते थे परन्तु अरब छोटे छोटे सम्प्रदायों में बटे हुए थे। मुहम्मद ने अल्लाह के नाम पर अरबों का संगठन किया और उनको (अरबों के अतिरिक्त) दूसरों के देशों, उनकी सम्पत्ति और स्त्रियों को युद्ध में जीतने को गर्व का कार्य कहा। मैं ने अरबों और अरबों को छोड़ कर दूसरों का प्रयोग जान बूझ कर किया है और मुसलमानों और दूसरों का प्रयोग नहीं किया। कारण यह है कि मुहम्मद के जीवन काल में प्रायः सभी मुसलमान अरब ही थे। उस समय अरबों और मुसलमानों में कोई अन्तर था ही नहीं और मुहम्मद के लिये अरबों को इस्लाम (जो स्वर्ग दिलवा सकता था) के नाम पर युद्द के लिये प्रेरित करना सहल था।

अल्लाह को मुसलमानों के अतिरिक्त सब से घृणा है क्योंकि वे अल्लाह को भगवान मान कर उसकी पूजा नहीं करते। क़ुरआन के अनुसार अल्लाह सृष्टि का सर्जनहार है। वह सर्वशक्तिमान, सर्वज्ञ, पूर्ण, स्वतंत्र और सब इच्छाओं से ऊपर है। अल्लाह के यह गुण मिथ्या हैं क्योंकि **वह प्रतिष्ठा, प्रेम और पूजा की इच्छा में पागल है। यदि मनुष्य अल्लाह को पूजें तो वह प्रसन्न होता है और यदि न पूजें तो अल्लाह महा दुःखी होता है। इसीलिये वह जो भी मुसलमान नहीं**

उनको गाली देता है और नरक की यातनाओं का डर दिखाता है। यदि नरक के डर से काम न बने तो वह स्वर्ग का प्रलोभन देता है। यह अल्लाह कैसा भगवान है जिसका अपना आनन्द मनुष्य की मान्यता पर निर्भर है ? उसकी पूजा करवाने की इच्छा इतनी प्रवल है कि वह पूर्ण या स्वतंत्र तो हो ही नहीं सकता। यदि भगवान चाहता तो वह ऐसे मनुष्यों का निर्माण करता जो भगवान को पूजें। या तो अल्लाह को पूजा का इच्छुक नहीं होना चाहिये या वह सर्जनहार नहीं।

अपनी महत्ता के लिये जन साधारण प्रशंसा चाहता है। इसका कारण यह है कि वह दूसरों पर अपनी धाक जमाना चाहता है ताकि वे उसकी आज्ञा मानें। पुराने काल में प्रार्थी के लिये सम्राट को दण्डवत् प्रणाम करना भी सम्राट का अपनी महत्ता सिद्ध करना ही था। प्रशंसा का अर्थ ही है कि प्रशंसा करने वाला प्रशंसनीय के प्रति अपनी हीनता को स्वीकार करे।

जैसा कि पहले लिखा है अल्लाह का आविष्कार मुहम्मद ने किया था। अल्लाह का अपना तो कोई अस्तित्व है ही नहीं वह तो काल्पनिक है। इसका उद्देश्य तो केवल यह है कि पैग़म्बर भगवान के नाम पर अपनी सत्ता जमा सके।

इस्लाम में मुहम्मद ही कर्ता धर्ता है। अल्लाह तो केवल नाम के लिये है। इसका प्रत्यक्ष उदाहरण वरतानिया (Britain) का राज्य है। यद्यपि नाम में राज्य सम्राज्ञी करती है परन्तु उसको हर आदेश प्रधान मन्त्री देता है। इसी प्रकार मुहम्मद अपनी पूजा करवाना चाहता है और वह किसी को भी जो मुहम्मद की सत्ता को नहीं मानता जीने नहीं देना चाहता। इसकी पुष्टि कुरआन में है जैसे:

> "खुदा और उसके फ़रिश्ते पैग़म्बर पर दरूद भेजते हैं। मोमिनो ! तुम भी पैग़म्बर पर दरूद और सलाम भेजा करो।" (३३:५६)

"आशीर्वाद और शान्ति प्रार्थना" (दरूद और सलाम) पूजा के प्रधान साधन हैं। सभी मतों में मनुष्य भगवान की पूजा करते हैं परन्तु इस्लाम में भगवान और सभी देवता मुहम्मद को पूजते हैं। मुहम्मद अपने आप को अल्लाह का सेवक कहता तो है पर वास्तव में मुहम्मद ही इस्लाम का कर्ता धर्ता है और अल्लाह तो नाम मात्र के लिये है।

यदि मुहम्मद ने कहा होता कि वह उन सव को जो अरब राष्ट्र के लिये युद्ध में मरेंगे या मारेंगे स्वर्ग देगा तो कोई भी उस की बात न सुनता। परन्तु अल्लाह के नाम पर दूसरों (जो अरब नहीं थे) से युद्ध करने की प्रेरणा से उसने अरब राष्ट्र की स्थापना के लिये दैवी शक्ति की सहायता ली। अरबों के लिये सांसारिक पुरस्कार तो दूसरों की सम्पत्ति और स्त्रियों को छीनना और उन पर राज करना बनाया। और यदि दुर्भाग्यवश कोई अरब युद्ध में मारा गया तो उसका पुरस्कार तो और भी अधिक था। वह तो सीधा स्वर्ग जायेगा।

इस्लाम के स्वर्ग की व्याख्या देने से पहले यह आवश्यक है कि मैं इस बात की खोज बीज करूं कि क्या अल्लाह वास्तव में है और क़ुरआन अल्लाह की पुस्तक है या ये दोनों मुहम्मद के आविष्कार हैं।

मुझे पूरा विश्वास है कि अल्लाह और क़ुरआन दोनों ही इलहाम (revelation) की शामी प्रथा पर निर्धारित मुहम्मद की राष्ट्रीय योजना के अंग हैं। यह इन बातों से स्पष्ट हो जायेगा।

सर्वप्रथम भगवान का विधान सारी सृष्टि के लिये सब के लिये एक समान होता है। इन में द्वन्द्व और भेद भाव कदापि नहीं होता। सभी कुछ निश्चित विधान से होता है। जैसे पानी के लिये २ भाग हाइड्रोजन गैस और १ भाग ऑक्सीजन गैस को निश्चित ढंग से मिलाना पड़ता है। इस में कोई भी अन्तर नहीं हो सकता। मुहम्मद ने कुरआन को अल्लाह का आदेश कहा जिसे बदला नहीं जा सकता।

"उसकी बातों को कोई बदलने वाला नहीं।" (६:११५)

यह वास्तविकता नहीं। मुहम्मद स्वयम् अल्लाह के विधान से ऊपर था। उदाहरणतया:

१. मैं ने पहले भी किबले के विषय में लिखा है। यदि सभी अल्लाह का विधान है तो ऐसे महत्वपूर्ण विषय में मुहम्मद का कोई हाथ नहीं होना चाहिये था। वह इस विषय में इसी लिये निर्णय कर सकता था क्योंकि वह ही इस्लाम का कर्ता धर्ता था।

२. क़ुरआन में विवाह के बिना सहवास निषिद्ध है। परन्तु मुसलमान ऐसा करते थे। स्वयम् मुहम्मद की एक रखेल तो अवश्य थी। कुछ लोगों का यह भी कहना है कि मुहम्मद की दो रखेल थीं।

३. क़ुरआन में किसी को भी एक समय में चार से अधिक पत्नियां रखना मना है परन्तु मुहम्मद की एक ही समय नौ पत्नियां थीं। स्पष्ट हैं कि मुहम्मद अल्लाह के विधान से ऊपर था या फिर अल्लाह मुहम्मद का ही आविष्कार था।

४. क़ुरआन के अनुसार यह आवश्यक है कि पति अपनी सभी पत्नियों से एक जैसा व्यवहार करे:

"जो औरतें तुम को पसन्द हों, दो-दो या तीन-तीन या चार-चार, उनसे निकाह कर लो और अगर इस बात का डर हो कि सब औरतों से बराबर का व्यवहार न कर सकोगे, तो एक औरत (काफ़ी है)।" (४:३)

परन्तु जब मुहम्मद की पत्नियों ने मुहम्मद के व्यवहार पर असंतोष प्रकट किया तो अल्लाह ने मुहम्मद को सब पत्नियों से एक जैसा व्यवहार करने से छुट्टी दे दी:

"(और तुम को यह भी अख्तियार है कि) जिस बीवी को चाहो, अलग रखो और जिसे चाहो अपने पास रखो और जिसको तुम ने अलाहिदा कर दिया हो, अगर उस को फिर अपने पास तलब कर लो, तो तुम पर कुछ गुनाह नहीं।" (३३:५१)

स्पष्ट है कि अल्लाह का विधान मुहम्मद पर लागू नहीं था क्योंकि अल्लाह मुहम्मद की सुविधा के अनुसार विधान को बनाता और बदलता रहता था।

५. क़ुरआन के अनुसार हर मुसलमान स्त्री को विवाह करने का अधिकार है इसमें स्त्री के पिता के मत से कोई भी अड़चन नहीं पड़ सकती। परन्तु जब मुहम्मद की पुत्री फ़ातिमा के पति अली ने अूबजहल की पुत्री (जो मुसलमान थी) से दूसरा विवाह (जिसकी इस्लाम में स्वीकृति है) करना चाहा तो मुहम्मद ने अली को रोक दिया। अबुजहल के मुसलमान न होने के कारण क़ुरआन में कोई मनाही नहीं थी। इसका कारण क्या था ? मुहम्मद ने मंच पर चढ़ कर कहा:

"अली को चाहिये कि मेरी पुत्री को तलाक दे क्योंकि मेरी पुत्री मेरा अंश है। जो उसको ठेस पहुंचाता है वह मुझे ठेस पहुंचाता है। जो उसे अशांत करता है वह मुझे अशांत करता है।" (Sahih Muslim Hadith: 5999)

कुरआन के इस आदेश का क्या हुआ ?

"उसकी बातों को कोई बदलने वाला नहीं।" (६:११५)

६. इस्लाम से पहले भी अरब मक्के को पावन शरणस्थान मानते थे अर्थात् इस पर आक्रमण करना निषिद्ध था। कुरआन में मक्के को परम पावन नगर (Mother of Cities) कहा गया है फिर भी मुहम्मद ने १०,००० सैनिकों के साथ मक्के पर आक्रमण किया था।

सहीह अल्बोखारी के नवें अध्याय की ५९ वीं इदीस में लिखा है कि: "अल्लाह ने मक्के को पावन शरण स्थान बनाया है। यह पहले भी था और भविष्य में भी रहे गा। अल्लाह ने कुछ घण्टों के लिये मुझे इस पर आक्रमण करने की आज्ञा दी थी।"

प्रथा के अनुसार मक्के को इतना पावन माना जाता था कि वहां वृक्ष काटने की भी मनाही थी।

ऐतिहासिक प्रमाण हैं कि मक्के के निवासी हार स्वीकार कर के रक्तपात से बचे। स्पष्ट है कि यदि वे युद्ध करते तो अल्लाह मुहम्मद को मक्का जीतने के लिये जितना भी समय चाहिये था देता। यह आश्चर्यजनक नहीं तो और क्या है। अल्लाह अपने "अटल विधान" को मुहम्मद के लिये बदल देता है। अल्लाह तो अवसर ढूंढता है कि मुहम्मद को कैसे प्रसन्न करे।

सही अल्बोखारी के तीसवें अध्याय की ४८ वीं हदीस के अनुसार जब हकीम की बेटी खौला ने मुहम्मद से विवाह करने का प्रस्ताव किया तो मुहम्मद की सब से छोटी पत्नी आइशा बोली "क्या एक स्त्री को किसी पुरुष को विवाह का प्रस्ताव करते लाज नही आती"?

परन्तु जब आइशा ने यह दिब्य समाचार सुना "(मुहम्मद), तुम अपनी

जिस बीवी को चाहो, अलग रखो और जिसे चाहो अपने पास रखो....." (३३:५१) तो आइशा बोली "ओ अल्लाह के पैग़म्बर, स्पष्ट है कि अल्लाह तुम्हें प्रसन्न करने में देर नहीं करता।"

आइशा ने ठीक ही कहा। अल्लाह (जो अपने को सर्जनहार और सर्वशक्तिमान कहता है) का एक मात्र कर्तव्य मुहम्मद को प्रसन्न करना है इसलिये अल्लाह सर्जनहार और सर्वशक्तिमान हो ही नहीं सकता। अल्लाह जो अपने विधान को एक मनुष्य को प्रसन्न करने के लिये बदल देता है कभी भी भगवान नहीं हो सकता। अल्लाह तो मुहम्मद का आविष्कार है जिसका एकमात्र कर्तव्य मुहम्मद के वचनों और कर्मों को दिव्य सिद्ध करना है।

यही कारण है कि जिहाद अर्थात् अल्लाह के नाम पर दूसरों (जो मुसलमान नहीं) की लूट मार और हत्या कर के स्वर्ग प्राप्त करना हर मुसलमान का ध्येय है। स्वर्ग के प्रलोभन के बिना सम्भवतः अरब दूसरी जातियों के विनाश के लिये इतने उत्साह से न लड़ते। मुहम्मद ने अरब राष्ट्र स्थापित करने के लिये जिस चतुरता से स्वर्ग के प्रलोभन का प्रयोग किया उस प्रकार कभी किसी और ने नहीं किया।

इस्लाम में स्वर्ग की परिभाषा क्या है? अरब लोग मरुस्थल में रहते थे जहां पर पानी और वृक्षों का अभाव था और जीवन दूर्गम था। गर्मी, भूख और संकटों में रहने वाले छायादार स्थानों, कुओं, स्रोतों और नदियों के सपने देखते थे। इसलिये कुरआन ने स्वर्ग का चित्रण इस प्रकार किया है।

> "और जो लोग ईमान ले आए और नेक अमल करते रहे, उन को ख़ुशखबरी सुना दो कि उन के लिए (नेमत के) बाग़ हैं, जिन के नीचे नहरें बह रही हैं, जब उन्हें उन में से किसी क़िस्म का मेवा खाने को दिया जाएगा।" (२:२५)

अरबों को इस्लाम की आवश्यकता इस से प्रकट होती है। (१३:३५) में यही दोहराया गया है। आगे चल कर स्वर्ग के उपहार बढ़ते ही जाते हैं।

> "मगर जो खुदा के खास बन्दे हैं। (४०) यही लोग हैं, जिन के लिए रोज़ी मुक़र्रर है। (४१) (यानी) मेवे और उन का एज़ाज़ किया जाएगा।

(४२) नेमत के बाग़ों में, (४३) एक दूसरे के सामने तख़्तों पर (बैठे होंगे), (४४) शराबे लतीफ़ के जाम का उन में दौर चल रहा होगा, (४५) जो रंग की सफ़ेद और पीने बालों के लिए (सरासर) लज्जत होगी, (४६) न उस से सर-दर्द हो और न वे उस से मतवाले हों, (४७) और उन के पास औरतें होंगी, जो निगाहें नीची रखती होंगी और आंखें बड़ी-बड़ी, (४८) गोया वह महफ़ूज अंडे हैं'', (४६) (३७:४०-४९)

फिर हूरों की और व्याख्या की गई है।

''इन में नीची निगाह वाली औरतें हैं जिन को जन्नत बालों से पहले न किसी इन्सान ने हाथ लगाया और न किसी जिन्न ने, (५६) गोया वे याकूत और मर्जान हैं।'' (५८) (५५:५६-५८)

''रहमान'' में स्वर्ग का पूरा चित्र खींचा गया है। वहां अनार और खजूर के वृक्ष ही वृक्ष हैं। वहां शीतल मंडपों में ग़ालीचों पर हरे तकियों के सहारे अनेक सुन्दर हूरें विराजमान हैं। चारों ओर पानी के स्रोत और हरियाली है।

(४४:५४) में कहा है कि यह हूरें मुसलमानों को मिलें गी। फिर (४७:१५) में स्वर्ग के वैभव की और भी प्रशंसा की गई है।

''जन्नत जिस का परहेज़गारों से वायदा किया जाता है, उस की खूबी यह है कि इस में पानी की नहरें हैं, जो बू नहीं करेगा और दूध की नहरें हैं, जिस का मजा नहीं बदलेगा और शराब की नहरें हैं, जो पीने वालों के लिए (सरासर) लज्जत है और शहदे मुसफ्फ़ा की नहरें हैं (जो मिठास ही मिठास है) और (वहां) उन के लिए हर क़िस्म के मेवे हैं और उन के परवरदिगार की तरफ़ से मरिफ़रत है। (क्या ये परहेज़गार) उन की तरह (हो सकते) हैं जो हमेशा दोज़ख में रहेंगे और जिन को खौलता हुआ पानी पिलाया जाएगा, तो उन की अंतड़ियों को काट डालेगा।'' (४७:१५)

स्वर्ग के वैभव को और भी बढ़ चढ़ कर बताने के लिये मुहम्मद ने नरक की यातनाओं का बखानभी इसी आयत में किया है। लिखा है कि नरक के वासियों (जो मुसलमान नहीं) को ''जिन को खौलता हुआ पानी पिलाया जाएगा, तो उन की अंतड़ियों को काट डालेगा।''

स्वर्ग वासियों के लिये और भी पुरस्कारों का वर्णन है। (५२:२२-२४) के अनुसार मुसलमानों की सेवा नवजवान ख़िदमतगार (जो ऐसे होंगे,) जैसे छिपाए हुए मोती करें गे। वहां पर जिस तरह के मेवे और गोश्त को उन का जी चाहेगा, हम उन को अता करेंगे। वहां वे एक दूसरे से जामे-शराब झपट लिया करेंगे............।" और फिर सुन्दर हूरें तो मिलें गी ही।

स्वर्ग के सुखों का वर्णन करने के पश्चात अल्लाह नरक की यातनाओं का वर्णन करता है।

> "फिर तुम ऐ झुठलाने वाले गुमराहो! (५१) थूहर के पेड़ खाओगे, (५२) और इसी से पेट भरोगे, (५३) और इस पर खौलता हुआ पानी पियोगे, (५४) और पियोगे भी तो इस तरह जैसे प्यासे ऊंट पीते हैं, (५५) बदले के दिन यह उन की मैहमानी होगी। (५६)" (५६:५१:५६)

> फिर स्वर्ग का और वर्णन है:

> "(नोकर-चाकर) चांदी के बासन लिए हुए उन के चारों तरफ़ फिरेंगे और शीशे के (निहायत साफ़-सुथरे) गिलास, (१५) और शीशे भी चांदी के, जो ठीक अन्दाज़े के मुताबिक़ बनाए गए हैं, (१६) और बहां उन को ऐसी शराब (भी) पिलायी गयी, जिस में सोंठ की मिलावट होगी। (१७) यह बहिश्त में एक चश्मा है, जिस का नाम सलसबील है। (१८) और उन के पास लड़के आते जाते होंगें, जो हमेशा एक ही हालत पर आएंगे। जब तुम उन पर निगाह डालो, तो ख्याल करो कि बिखरे हुए मोती हैं। (१६) और बहिश्त में (जहां) आंख उठाओगे, कसरत से नेमत और शानदार सल्तनत देखोगे। (१०) (उन के बदनों) पर हरी दीबा और अतलस के कपड़े होंगे और उन्हें चांदी के कंगन पहनाए जाएंगे और उन का परबरदिगार उन को निहायत पाकीज़ा शराब पिलाएगा। (२१) यह तुम्हारा बदला है और तुम्हारी कोशिश (खुदा के यहां) मक़बूल हुई। (२२)" (७६:१५-२२)

हूरों (सुन्दर कन्याओं) के वर्णन का तो अन्त ही नहीं। यह "बड़े बड़े कुचों वाली" अप्सराएं मुसलमानों की सब प्रकार से सेवा करें गी।

हदीसों में विशेषकर (Jame Tirmzi, Vol. 2) अध्याय "स्वर्ग की स्त्रियां" पृष्ठ १३५-१४०, में हूरों का वर्णन इस प्रकार है

१. हूरों के शरीर पारदर्शी (Transparent) हैं।
२. हूरों का सफ़ेद रंग देख कर आंखें चका चौंध हो जाती हैं। उनकी आंखें बड़ी बड़ी और काली हैं।
३. लज्ञावश हूरों की आंखें झुकी झुकी हैं।
४. हूरों के शरीर शीशे के बर्तन में लाल मदिरा के समान हैं।
५. हूरें मीठा बोलती हैं और अपने साथियों से प्रेम करती हैं।
६. हूरें अक्षतयोनि कन्याएं हैं और उनको पीड़ा का आभास नहीं होता।
७. हूरों के कुच गोल और सुदृढ़ हैं। वे लटकते नहीं।
८. हूरें राज भवनों में रहती हैं।
९. -मुहम्मद ने कहा "हर मुसलमान पुरुष का पुरुषत्व सौ गुणा हो जायेगा"।
१०.मुसलमनों को विश्वास है कि स्वर्ग में हर मुसलमान को सत्तर हूरें और अनेक सुकुमार मिलें गे।

अब स्वर्ग के रूप का व्याख्यान करने की और क्या आवश्यकता है ? उस में प्रवेश करने के लिये जिहाद करना आवश्यक है।

"(मुसलमानो !) तुम पर (खुदा के रास्ते में) लड़ना फ़र्ज कर दिया गया है, बह तुम्हें ना-गबार तो होगा। मगर अजब नहीं कि एक चीज़ तुमको बुरी लगे और बह तुम्हारे हक में भली हो और अजब नहीं कि एक चीज़ तुमको भली लगे और बह तुम्हारे लिए नुक्सानदेह हो। और (इन बातों को) खुदा ही बेहतर जानता है और तुम नहीं जानते।" (२:२१६)

"ऐ नबी ! मुसलमानों को जिहाद पर उभारो । अगर तुम में २० आदमी साबित क़दम रहने बाले होंगे, तो दो सौ काफ़िरों पर गालिब रहेंगे और अगर सौ (ऐसे) होंगे, तो हजार पर गालिब रहेंगे, इस लिए कि काफ़िर ऐसे लोग हैं कि कुंछ भी समझ नहीं रखते।" (८:६५)

"खुदा ने मोमिनों से उन की जानें और उन के माल खरीद लिए हैं (और इस के) बदले में उन के लिए बहिश्त (तैयार की) है। ये लोग खुदा की राह् में लड़ते हैं तो मारते भी हैं और मारे जाते भी हैं। यह तौरात और इंजील और क़ुरआन में सच्चा वायदा है, जिस का पूरा करना उसे जरूर है और ख़ुदा से ज़्यादा वायदा पूरा करने वाला कौन

है, तो जो सौदा तुम उस से किया है, उस से ख़ुश रहो और यही बड़ी कामियाबी है।" (९:१११)

इस्लाम में हर मुसलमान का कर्तव्य है कि वह स्वर्ग पाने के लिये दूसरों का नाश करे। इस्लाम में जिहाद ही सब से बड़ी पूजा है और जो कोई जिहाद में भाग लेना नहीं चाहता वह सच्चा मुसलमान नहीं। कुछ मुसलमान विद्वान ढोंग करते हैं कि जिहाद आत्मरक्षा के लिये युद्ध है। यह इस्लाम के इस मूल सिद्धांत का मिथ्या रूपी कथन है। एक दो आयतों से ऐसा अर्थ निकाला जा सकता है पर इस्लाम का इतिहास इस बात का खंडन करता है। इरान, मिस्र और हिन्दुस्तान पर मुसलमानों के आक्रमण साम्राज्यवादी थे। यह सत्य है कि मक्का के लोगों ने मुहम्मद को पीड़ित किया था। परन्तु इन आयतों का मनोरथ तो केवल यह था कि यदि आवश्यक्ता पड़े तो कुछ समय के लिये मुसलमान आत्म रक्षा और उदारता का ढोंग करें -- केवल उस समय तक जब तक वे अधिक बलशाली बन जायें। जिहाद आक्रमणकारी युद्ध है क्योंकि इस्लाम में मुसलमानों का दायित्व है कि वे लूट मार, हत्या और स्त्री अपहरण कर के दूसरों पर शासन करें। इस्लाम मुसलमानों को दूसरों से निरन्तर युद्ध करने का आदेश देता है।

"मुझे अल्लाह का आदेश है कि मैं दूसरों से तब तक युद्ध करूं जब तक वे यह स्वीकार न करें कि अल्लाह ही एक मात्र भगवान है और मैं उसका पैग़म्बर हूं और मैं क़ुरआन लाया हूं। जब वे यह मान लें तभी उनका जीवन और उनकी सम्पत्ति सुरक्षित होगी................" (सही मुसलिमः हदिस ३१)

यदि अल्लाह से भगवान का तात्पर्य है तो यहूदी, इसाई और हिन्दू सदा ही भगवान में विश्वास रखते आये हैं। **अतः यह भगवान में विश्वास रखने या न रखने का झगड़ा नहीं। झगड़ा तो मुहम्मद (जो अरब साम्राज्य का सम्राट बनना चाहता था और भगवान के स्थान पर अपनी पूजा करवाना चाहता था) को मानने या न मानने का है।** इलहाम के सिद्धांत का उद्देश्य तो केवल एक ही है कि पैग़म्बर अपने आप को भगवान का रूप दे सकें। इस्लाम में अल्लाह और देवता सभी मुहम्मद के पुजारी हैं जिस से यह विदित होता है कि मुहम्मद की पूजनीय बनने की इच्छा बहुत प्रबल थी।

अरबों को उनका राष्ट्रीय भगवान (अल्लाह), क़ुरआन और पैग़म्बर (मुहम्मद) दे कर मुहम्मद अरबों की एक अजेय सेना का निर्माण करना चाहता था। इस कार्य के लिये जिहाद का सिद्धांत बहुत उपयोगी था। यदि जिहाद से अरब युद्ध जीत लें तो दूसरों की सम्पत्ति और स्त्रियों का अपहरण कर के उनको पृथ्वी पर ही स्वर्ग मिले गा। और यदि वे युद्ध में मारे गये तो उन को हूरों के सहित स्वर्ग में स्थान प्राप्त हो गया। हानि का तो प्रश्न ही नहीं था।

जब मुहम्मद सितम्बर ६२२ ईसबी में मदीने गया तो वह एक सेना इकट्ठी करने में जुट गया। मुहम्मद के एक अच्छे सेनापति होने के कारण ही लोगों ने उसकी बात सुनी।

पहले तेरह साल में केवल ७० लोग मुहम्मद के मत के अनुगामी बने। और तो और उसके अपने सम्प्रदाय कुरेश के लोग भी मुहम्मद की हत्या करने की योजना में दूसरे सम्प्रदायों से मिल गये। जब तक मुहम्मद मक्के में था उसके अनुगामियों की संख्या जिहाद के लिये पर्याप्त नहीं थी। मदीने में उसको और अनुगामी मिले किन्तु ७० अनुगामियों से क्या हो सकता है ? मुहम्मद तो ईरानियों और बैज़न्टीनियों से भी शक्तिशाली राष्ट्र का निर्माण करना चाहता था। राष्ट्रों को जीतने का एक ही साधन था अर्थात् शक्तिशाली सेना। मुहम्मद ने अपनी युद्ध क्षमता का नये ढंग से प्रयोग किया। उसने जिहाद का आविष्कार किया जिस से अल्लाह के नाम से लूटने को परम पावन कर्म कहा। जीतने पर लूट के धन और अपहरण की गई स्त्रियों का पृथ्वी पर ही स्वर्ग के समान भोग और युद्ध में मृत्यु होने पर तो सीधे स्वर्ग का वास जिस में भोग पदार्थों और हूरों की कमी नहीं होगी।

मदीने में मुहम्मद के अनुगामियों में से थोड़ों ने ही काम धन्धे आरम्भ किये। बाकी सब ने लूट मार को ही अपना धन्धा बनाया। मदीने के दस सालों के वास में मुहम्मद ने ६५ लूट मार की योजनाएं बनाईं। इन में से २७ लूट मार के आक्रमण तो स्वयम् उसके नेतृत्व में हुए। जनवरी ६२४ ईसवी में मुहम्मद के अनुगामियों ने मक्के के निकट एक कारवां पर आक्रमण किया। इस आक्रमण से मुसलमानों ने पावन शरण स्थान मक्के की चिर काल से

चली आई पावनता को भी भंग किया। फिर मार्च ६२४ ईसवी में ३१५ व्यक्तियों के साथ मुहम्मद ने उमाय्या (Umayyah) सम्प्रदाय के एक धनी व्यक्ति अबूसूफ़यान (Abu Sufyan) के कारवां पर आक्रमण किया। अबूसूफ़यान तो बच कर निकल गया परन्तु अबूजाहल ने जिसके पास ८०० सैनिक थे मुहम्मद को सीधा करने की ठानी। १५ मार्च ६२४ ईसवी बद्र के युद्ध में मुहम्मद की विजय हुई जिस से न केवल उसकी युद्ध कुशलता की धाक जम गई पर उसकी पैग़म्बरी का मान्यता भी बढ़ गई। मुहम्मद के पास अपने अनेक हथियार थे और वह स्वयम् युद्ध में भाग लेता था जिन में अधिकतर उसकी जीत होती थी। केवल एक बार उहद में उसकी हार हुई।

मुहम्मद ने अरबों को कुशल सेनिक बनाने के लिये मदीने के दस सालों में ६५ धावों की योजनाएं बनाई और स्वयम् २७ धावों का निर्देशन किया। ६३० ईसवी में मुहम्मद की सेना में ३०,००० सेनिक थे जब उसने सीरिया (Syria) पर धावा बोला। धीरे धीरे युद्ध कुशलता और राजनैतिक कुशलता के कारण वह अरब देश का सम्राट माना जाने लगा। उसने अरबों के स्वाभिमान को इतना पुष्ट किया कि मुहम्मद की मृत्यु के २० साल में ही अरबों ने बैज़न्टीन और ईरान जैसे शक्तिशाली राष्ट्रों को परास्त किया।

मुहम्मद के कारण ही अरबों की संस्कृति का अब भी विकास हो रहा है यद्यपि राजनैतिक क्षेत्र में अरबों का महत्व दिन प्रति दिन घट रहा है। इसका रहस्य है

काबे को सर्वश्रेष्ठ स्थान घोषित करना;
काबे को परम पावन शरण स्थान बनाना;

काबे की यात्रा को मुसलमानों के लिये अनिवार्य बनाना जिस से अरबों को आर्थिक लाभ (तेल हो न हो) हो;

अरबी क़ुरआन को अल्लाह का संदेश बनाना;
काबे की मूर्ति वाले अल्लाह को इस्लाम का भगवान बनाना;
अपने आप को अल्लाह और मुसलमानों में मध्यस्थ बनाना; और
यह घोषित करना कि अरबों का शत्रु मुहम्मद का शत्रु है।

परिणाम स्वरूप मुसलमान अरब संस्कृति को अपनी संस्कृति से श्रेष्ठ

मानते हैं। एक तुर्की को छोड़ कर सब देशों के मुसलमान अपनी राष्ट्रीय पहचान के विरुद्ध केवल मुसलमान कहलाना चाहते हैं। उनका अपना कोई इतिहास नहीं जिस पर उन को गर्व हों।

इतिहास में इसकी तुलना यहूदियों से की जा सकती है। जेरूसलम के प्रेम में अन्धे यहूदियों ने कभी भी किसी देश को नहीं अपनाया। अपने राष्ट्र के इस अभाव के कारण यहूदियों को बहुत कष्ट उठाने पड़े। परन्तु यहूदियों के इस विचार का कुछ तो आधार है। इस्राईल उनका मूल देश है और वे सदा ही वहां लौटना चाहते थे। अब वहां लौट कर उन्हों ने अपनी प्रतिष्ठा पुनः स्थापित कर ली है।

दूसरे देशों के मुसलमानों की अवस्था इस के विपरीत है। अरब देश उनका अपना देश नहीं परन्तु वे इस्लाम के नाते अरब देश को अपना मूल देश मानते हैं जो कदापि वास्तविकता नहीं। न तो अरब देश उनको स्वीकार करें गे और न ही अरब देशों में सौ करोड़ मुसलमानों को बसाने की क्षमता है।

मुहम्मद ने अपने आप को इस्लाम की नींव और स्वर्ग दिलाने का एकमात्र साधन बना कर दिये और पतंगें जैसी स्थिति बना दी है। पतंगें बिना कारण अपने आप को भस्म करने पर उत्सुक हैं। यही दशा हिन्दुस्तान, पाकिस्तान और बंगला देश के मुसलमानों की है।

आज से १००० साल पूर्व हिन्दुस्तान के वासी धनी, वीर और अविष्कारी थे। हिन्दुस्तान के धन को लूटने के लिये उन पर बार बार विदेशियों ने आक्रमण किये। यह मिथ्या है कि हिन्दुस्तान के वासी कायर थे। अरब आक्रमणकारी ३०० वर्ष तक सिन्ध से आगे किसी भी भाग को जीत न सके। धीरे धीरे जैसे ही तुर्की के कारण और देशों में इस्लाम की सत्ता बढ़ी हिन्दुस्तान के मुसलमानों ने हिन्दुस्तान के राष्ट्र से नाता तोड़ लिया। इस्लाम के कारण वे हिन्दुस्तान को एक सराये के समान समझने लगे। वे अरब देश को अपना देश मानने लगे और मक्के के गौरव के गान गाने लगे। परिणाम यह हुआ कि वे अपने पूर्वजों की धरती और हिन्दुस्तान के गौरव से घृणा करने लगे। वे तो अपने देश की मस्जिदों को भी अरब देश की मस्जिदों से

घटिया मानते हैं। उनके मन में हिन्दुस्तान की संस्कृति के प्रति इतनी घृणा हो गई कि उनके विचार में उनके पूर्वजों ने जो कुछ भी किया था वह सब घटिया और निरर्थक था। वे तो जिहाद कर के हिन्दुस्तान के मन्दिरों और दूसरे धर्मस्थानों को नष्ट कर के और लूट मार और हत्या कर के सभी को बल पूर्वक मुसलमान बनाने पर तुले हैं। अपनी संस्कृति से घृणा के कारण ही उन्हों ने अपने देश का बटवारा करवाया ता कि वे इस्लाम के नाम पर अरब संस्कृति का पालन कर सकें।

हिन्दुस्तान के मुसलमानों का मक्के से प्रेम के कारण अपने देश का वटवारा करवाना, अपनी संस्कृति से घृणा और अपनी हीनता स्वीकार करना, मुहम्मद की देन है जिसने इस्लाम में अरब देश को ऊंचा और दूसरे सब देशों को नीचा स्थान दिया। दूसरे देशों के मुसलमानों में मानसिक दासता का भाव दिन प्रति दिन बढ़ता ही जा रहा है। मूल कारण तो दरिद्रता और सामाजिक अन्याय हैं। किन्तु मुसलमानों को इस बात का विश्वास है कि अन्त में मुहम्मद उन्हें स्वर्ग दिलवाये गा जहां पर सब पदार्थों के साथ हूरें उनका स्वागत और उनकी हर इच्छा पूरी करें गी जो पृथ्वी पर दरिद्रता भोगने के दुःख को भुला देगा।

मुहम्मद के स्वर्ग दिलवाने का अन्ध विश्वास ही उनके जीवन का सार है। इस के बिना उनका जीवन नीरस हो जायेगा तथा वे दरिद्रता और सामाजिक अन्याय को सहन न कर पायें गे। मुल्ला और राजनीतिज्ञ इस महान आपत्ति को और बढ़ाते हैं। वे मुहम्मद पर अन्धविश्वास को प्रोत्साहन देते हैं ता कि उनकी अपनी सत्ता बनी रहे। **दुःख तो इस बात का है कि ये मुल्ला और राजनीतिज्ञ कपटी हैं। अधिकतर तो इस्लाम में विश्वास भी नहीं रखते। उनके लिये तो इस्लाम अपनी इच्छा पूर्ति के लिये एक अच्छा साधन है।**

मुसलमानों की यह विचार धारा उन देशों तक ही सीमित नहीं। जिन देशों में अब मुसलमानों का निवास है वहां पर भी यही स्थिति है। उदाहरण स्वरूप इंगलिस्तान में उन्हों ने अपनी संसद बनाई हुई है जो कि देश द्रोह के समान है। जब इस्लाम में प्रजातंत्र का स्थान ही नहीं तो इस संसद का क्या अर्थ ? मुल्ला लोग इस प्रकार इस्लाम मत के प्रयोग से अपना उल्लू सीधा

करते हैं। मुसलमानों की स्पेन और बोज़निया (Bosnia) में जो गति हुई वैसी ही इंगलिस्तान में भी होगी क्योंकि मुसलमानों और उनकी संतान की विचार धारा और कर्म इंगलिस्तान के विरुद्ध हैं और ये लोग इंगलिस्तान की उदारता को नहीं अपनाते । और तो और अधिकतर मुसलमानों को इंगलिस्तान से तनिक भी प्रेम नहीं। यदि इंगलिस्तान इतना बुरा देश है तो वे दूसरे देशों से इंगलिस्तान क्यों आये हैं? यह मुल्ला इतना भी नहीं सोचते कि वे अपने स्वार्थ के लिये मुसलमानों का भविष्य नष्ट कर रहे हैं। मुहम्मद अपने देश की राष्ट्रीयता का प्रतीक था। परन्तु मुसलमान अपने देशों के विरुद्ध कार्य करते हैं।

हिन्दुस्तान, पाकिस्तान और बंगलादेश के मुल्लाओं और मुसलमानों को कब समझ आयेगी कि योरप (Europe) के लोगों को अपनी राष्ट्रीयता पर गर्व है और उन पर अरब संस्कृति का जादू नहीं चले गा । उनको चाहिये कि वे अपने राष्ट्रीय अस्तित्व को पहचानें और उस पर गौरव करें।

विदेशी धर्म सिद्धान्त (जिस का एकमात्र उद्देश्य अरबों की सत्ता का गुण गान करना है) में अन्ध विश्वास करने वाले मुसलमान स्वयम् ही अपनी राष्ट्रीयता और स्वाभिमान का अपमान सहते हैं वे बदले में स्वर्ग में हूरों और सुकुमार लड़कों के उपलब्ध होने के सपने देखते है।

मुल्ला लोग इस्लाम को प्रेम और समानता का अन्तर्राष्ट्रीय मत बता कर यह कहते हैं कि इस्लाम मानव जाति की सभी समस्याओं का समाधान है। सत्य तो यह है कि इस्लाम के अधिकतर सिद्धान्त दूसरे मतों से लिये गये हैं और वे आधुनिक काल में निरर्थक हैं। इसी लिये मुसलमान देश इस्लाम का गुण गान तो करते हैं पर पश्चिमी विधानों का पालन करते हैं।

इन सब बातों से स्पष्ट है कि वास्तव में इस्लाम अरब राष्ट्रीयता का साधन है जिसका उद्देश्य दूसरों पर अरब संस्कृति ठोसना है। हिन्दुस्तान, मिस्र और ईरान का इतिहास इस बात का साक्षी है।

मुल्ला लोग और राजनीतिज्ञ इस्लाम के धन्धे से अपनी सत्ता जमाते हैं। इसलिये वे दोनों दल इस्लाम की सार्थकता को बढ़ चढ़ कर बताते हैं और

जो कोई भी उनसे सहमत नहीं उस पर "काफ़िर", "इस्लाम निन्दक" आदि का फ़तवा लगा कर मुसलमानों को उन के विरुद्ध भड़काते हैं। वे छल कपट से अपना धन्धा ख़ूब चलाते हैं।

एक सच्चा मुसलमान मत विरोध पर हिंसा का प्रयोग नहीं कर सकता क्योंकि क़ुरआन में लिखा है:

"मत के विषय में ज़बरदस्ती अनुचित है" और कहता है

"................... अगर सच्चे हो तो दलील पेश करो।" (२:१११)

यह पुस्तक मुसलमानों को चुनौती है। यदि वे निष्कपट हैं तो आयें और अपने दृष्टि कोण को सिद्ध करें।

अनवर शेख़: जीवनपंजी

संक्षिप्त परिचय

अनवर शेख़ कश्मीरी पंडितों के वंशज है। दो सौ वर्ष पहले उनके पूर्वजने इस्लाम को अंगीकार किया और वे इस मजहब के तीक्ष्ण प्रचारक हो गये। अनवर शेख़ १९२८ में गुजरात (अब पाकिस्तान में) शहर के निकट एक गांव में पैदा हुए। उनकी शिक्षा-दीक्षा इस्लाम के विद्वान के रूप में हुई। फलस्वरूप, उन्होंने पाकिस्तान के निर्माण में उत्साहपूर्ण भाग लिया।

पाकिस्तान और बंगलादेश के मुसलिमों पर विभाजन का अत्यन्त प्रतिकूल प्रभाव महसूस करने के बाद वे इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि इस्लाम का द्वि.राष्ट्र सिद्धान्त उन लोगों का महज एक राजनीतिक हथकंडा है, जिनके उद्देश्यों की यह चाकरी करता है; मुसलिम राष्ट्र नामक कोई चीज है ही नहीं। भारतीय उपमहाद्वीप के मुसलिम उसी तरह आज गुमराह हैं, अपनी राष्ट्रीयता के बारे में जिस तरह युरोप के लोग पथभ्रष्ट हैं अपने बारे में एक क्रिश्चियन राष्ट्र के भ्रान्तिपूर्ण विचार रखने के कारण। समस्या के गहन चिन्तन के बाद अनवर शेख़ इस नतीजे पर पहुंचे कि इस्लाम कोई मजहब नहीं है, बल्कि अरब का राष्ट्रीय आन्दोलन है, जो गैरअरब मुसलिमों पर अरब प्रभुत्व थोपना चाहता है। अनवर शेख़ का सिद्धान्त इतना प्रबल अकाट्य तर्क है कि कोई भी मुसलिम विद्वान आज तक इसका खंडन नहीं कर पाया है। उल्टे उन्होंने खामोशी की साजिश रच डाली और इस तर्क का गला घोटने के लिए सब कुछ किया।

अनवर शेख़ अंग्रेजी और उर्दू दोनों में लिखते हैं। वे कई पुस्तकों के लेखक हैं और अपनी दक्षता के लिए भली भांति जाने माने जाते हैं; अर्थशास्त्र, इतिहास, कानून, मनोविज्ञान, कविता और साहित्य पर उनके लेख बड़े चाव से सम्मानपूर्वक पढ़े जाते हैं हालाकि वे खास तौर पर कवि, दार्शनिक और एक अप्रतिम विद्वान हैं। उनकी त्रैमासिक पत्रिका 'लिबर्टी' (आजादी) अन्तर्राष्ट्रीय ख्यातिप्राप्त है।

लेखक के बतौर उन्होंने जीवन के उत्त्थान, पतन को देखा है। वह स्वशिक्षित एवं स्वनिर्मित हैं। जब उनका जमीन-जायदाद का व्यापार अपने चरम उत्कर्ष पर था, तब उन्होंने इसको बंद कर दिया, अपनी चेतना के आदेशों की सेवा करने के लिए। उन्होंने पवित्र हिन्दू-ग्रन्थों का अध्ययन किया और उन्होंने यह सार-तत्त्व ग्रहण किया कि सारे भारतीयों का सांस्कृतिक परिचय, चाहे वे किसी भी मजहब या धर्म के हों, वेदों के मूल में तथा उनके स्वदेशी धर्मशास्त्रों में ही स्थित है और जबतक वे अपनी जड़ों तक वापस नहीं जाते हैं उनका जीवन एक जड़ से उखड़े हुए दरख्त से भिन्न नहीं होगा। अनवर शेख़ का हार्दिक विचार यह है कि जब तक भारतीय उपमहाद्वीप के लोग अपनी वैदिक पहिचान को नहीं सम्मझते हैं तब तक वे पिछले १००० वर्षों से भी कहीं अधिक कष्ट उठायेंगे।

अनवर शेख़ १९५६ में ग्रेट ब्रिटेन चले गये। उन्होंने एक वेल्श् स्त्री से शादी की और तीन सन्तान के पिता हैं।

कारडिफ्

वेलस्

सितम्बर २७: १९९६